अक्टूबर-2013 ◆ वर्ष 2 ◆ अंक 5 ◆ उदयपुर

ओ३म्

सत्यार्थ सौरभ

अक्टूबर-२०१३

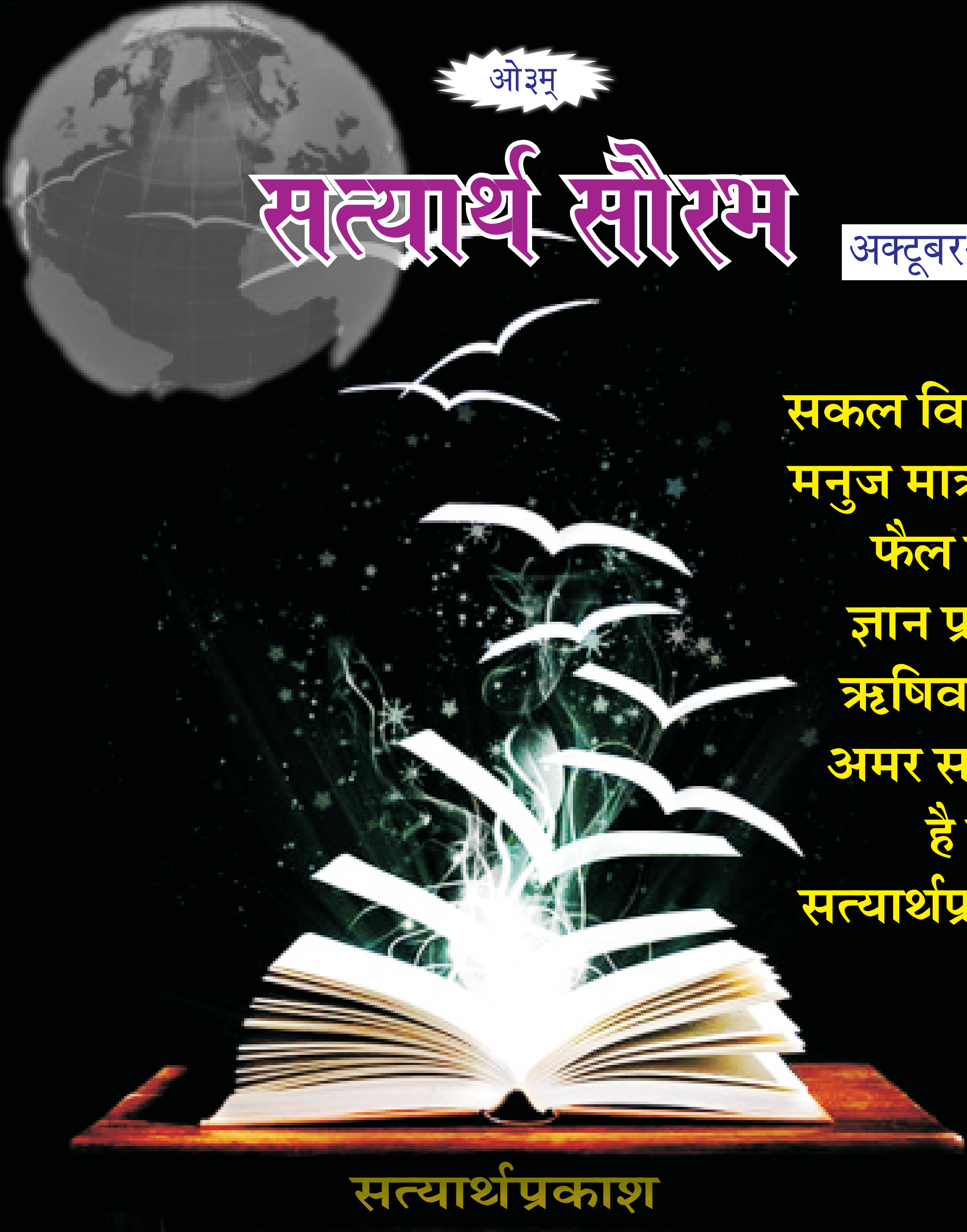

सकल विश्व में
मनुज मात्र तक
फैल रहा है
ज्ञान प्रकाश
ऋषिवर तेरी
अमर साधना
है प्यारा
सत्यार्थप्रकाश

सत्यार्थप्रकाश

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति को समर्पित

श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास
नवलखा महल परिसर, गुलाब बाग, महर्षि दयानन्द मार्ग,
उदयपुर-313001 (राज.)

₹ १० २२

MDH
मसाले
असली मसाले
सच-सच
MDH
DEGGI MIRCH
Chunky Chat masala
Chana masala
Sambhar masala
Pav Bhaji masala
Peacock Kasoori Methi
Garam masala
Kitchen King
ESTD. 1919
महाशियाँ दी हट्टी (प्रा०) लिमिटेड
9/44, कीर्ति नगर, नई दिल्ली-110015
Website : www.mdhspices.com

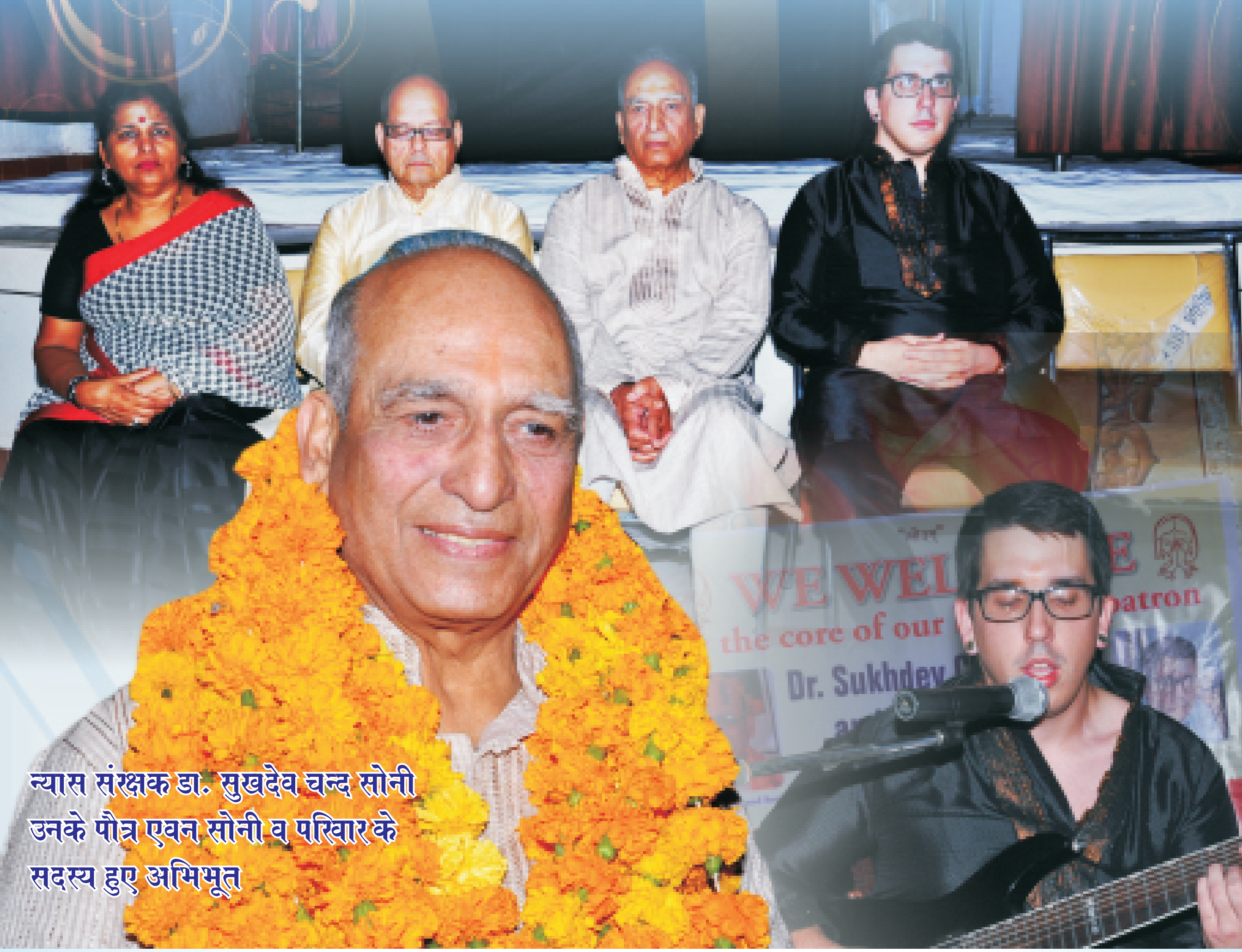

न्यास संरक्षक डा. सुखदेव चन्द सोनी उनके पौत्र एवन सोनी व परिवार के सदस्य हुए अभिभूत

नवलखा महल में है भारत के प्राचीन वैभव व गौरव का पदे-पदे दिग्दर्शन।

श्रोताओं से खचाखच भरा माता लीलावन्ती सभागार, शानदार भजन संध्या

सत्यार्थप्रकाश रचना कक्ष में काँच का स्वचालित-विद्युतप्रकाशित स्तम्भ का निर्माण जिस पर अंकित सत्यार्थप्रकाश की ११२ शिक्षाएँ करेंगी पर्यटकों का मार्गदर्शन।

चित्र दीर्घा का नाम होगा आर्यावर्त्त।
चित्र दीर्घा में अन्तर्राष्ट्रीय मापदण्डों का रखा ध्यान।
सृष्ट्युत्पत्ति व वेदाविर्भाव-ऋषि अग्नि से लेकर महर्षि दयानन्द पर्यन्त भारतीय गौरव के संवाहक होंगे प्रेरणा के स्रोत।

आर्य समाज का भव्यतम, आकर्षण प्रेरणा केन्द्र जो करेगा लाखों पर्यटकों के जीवन को निर्देशित।

मर्यादा पुरुषोत्तमश्रीराम, योगीराज श्रीकृष्ण, महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी भारतीय स्वतन्त्रता वीरों के जीवनवृत्त भी शीघ्र किए जायेंगे दीर्घा में प्रदर्शित।
कै. देवरत्न आर्य पुस्तकालय का होगा शीघ्र निर्माण।

नवलखा महल नवीन सजधज के साथ बना आकर्षण व प्रेरणा का केन्द्र

संगीत फव्वारे, ऋषि महिमा के गीत, महापुरुषों के भव्य चित्र, अद्‌भुत प्रकाश संयोजन सभी ने दिया मंत्र मुग्ध करने वाला वातावरण।

सत्यार्थ प्रकाश की शिक्षाओं को अपने आँचल में समेटे, सम्पूर्ण परिवार के लिए, हर आयु समूह के लिए, पठनीय और समर्पित

न्यास का मासिक मुखपत्र

सत्यार्थ सौरभ

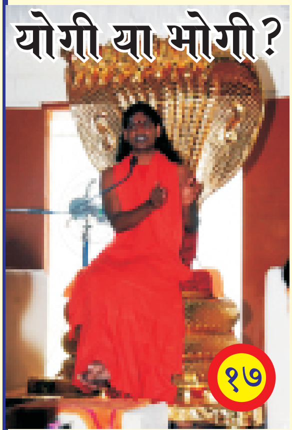

रामायण कालीन अद्भुत विज्ञान

प्रमुख संरक्षक - सत्यार्थ सौरभ

महाशय धर्मपाल जी (एम.डी.एच.)
डॉ. सुखदेव चन्द सोनी (अमेरिका)

परामर्शदाता संपादक मण्डल

डॉ. महावीर मीमांसक
आचार्य वेदप्रकाश श्रोत्रिय
डॉ. ज्वलंत कुमार शास्त्री
डॉ.सोमदेव शास्त्री
डॉ. रघुवीर वेदालंकार
आचार्य वेदप्रिय शास्त्री

सम्पादक

अशोक आर्य

प्रबन्ध सम्पादक

भवानी दास आर्य

प्रबन्ध सहयोग

नवनीत आर्य

व्यवस्थापक

सुरेश पाटोदी (मो.9829063110)

सहयोग ◆ भारत	विदेश
संरक्षक - ११००० रु.	$ 1000
आजीवन - १००० रु.	$ 250
पंचवर्षीय - ४०० रु.	$ 100
वार्षिक - १०० रु.	$ 25
एक प्रति - १० रु.	$ 5

भुगतान राशि धनादेश/चैक/ड्राफ्ट **श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास** के पक्ष में बना न्यास के पते पर भेजें। अथवा यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया, उदयपुर खाता संख्या : ३१०१०२०१००४१५१८ IFSC CODE- UBIN 0531014 में जमा करा अवश्य सूचित करें।

सृष्टि संवत्
१९६०८५३११४
आश्विन शुक्ल तृतीया
विक्रम संवत्
२०७०
दयानन्दाब्द
१८९

October - 2013

सत्यार्थ-सौरभ में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र उदयपुर ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

विज्ञापन शुल्क (प्रति अंक)

कवर २ व ३ (भीतरी आवरण) रंगीन ३५०० रु.

अन्दर पृष्ठ (श्वेत-श्याम)

पूरा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	२००० रु.
आधा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	१००० रु.
चौथाई पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	७५० रु.

समाचार २२

हलचल २३

०४ वेद सुधा
०७ सबसे बड़ा शत्रु अज्ञान
१० 'अमृत रस बरसे जग चखने को तरसे'
१२ शब्द यात्राएँ
१३ आयुर्वेद के ज्ञाता आचार्य सुश्रुत
१४ बन रहे हैं मानसिक रोगी
१६ एक सम्पूर्ण उपचार पद्धति
२४ Dying pattern of birds
२६ स्त्री को शिक्षा का अधिकार
२८ अमर-देहदान
३० ईश्वर तेरी दुनिया

स्वामी श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर

वर्ष - २ अंक - ५

मुद्रण द्वारा - चौधरी ऑफसेट, (प्रा.लि.) ११-१२, गुरु रामदास कॉलोनी, उदयपुर

प्रकाशक

श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास
नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर (राजस्थान) ३१३००१
(०२९४) २४१७६९४, ९३१४५३५३७९, ९८२८६२६७४७
www.satyarthprakashnyas.org, E-mail : satyarthsandesh@gmail.com

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित तथा कार्यालय श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास नवलखा महल गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य

ओ३म्

वेद सुधा

देशोत्थान के उपाय

श्रमेण तपसा सृष्टा ब्रह्मणा वित्तर्ते श्रिता ॥ -अथर्व. १२/५/१

ऋषिः- कश्यपः।। देवता- ब्रह्मगणी।। छन्दः- प्राजापत्यानुष्टुप्।।

शब्दार्थ- प्रभु मनुष्यमात्र को आज्ञा देते हैं कि तुम सब सदा (श्रमेण) परिश्रम से तथा (तपसा) धर्मपालन और संयम से (सृष्टाः) संयुक्त रहो, (ब्रह्मणा) परमात्मविश्वास और विज्ञान से भी उन्नत होते हुए (ऋते) पक्षपातरहित न्यायपूर्वक (वित्ते) धनादि भोग-पदार्थों की प्राप्ति में (श्रिताः) सदा चलने वाले बने रहो।

व्याख्या- इस मंत्र में किसी भी देश के मानव-समाज की वास्तविक उन्नति तथा सुख-शान्ति की प्राप्ति का महत्वपूर्ण उपदेश दिया गया है। मन्त्र में पहली बात कही गई है कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति को परिश्रमी होना चाहिए। जिस देश के लोग उद्यम और परिश्रम से कतराएँ, वह देश सदा दरिद्र और पिछड़ा रहेगा। दुर्भाग्य से हमारे देश में भी यह दुर्गुण वास्तविक शिक्षा के अभाव से तथा लम्बी दासता के कारण समाज में घर कर गया है। प्रायः प्रत्येक व्यक्ति काम से बचना चाहता है। पढ़ाई-लिखाई का उद्देश्य भी यही समझा जाता है कि इसके सहारे, बिना परिश्रम के अथवा कम श्रम करके अधिक धन कमाया जा सकता है और उस धन से विपुल उपभोग की सामग्री जुटाई जा सकती है।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् होना चाहिए था कि राष्ट्र का प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यता और शक्ति के अनुसार राष्ट्र-निर्माण में जुट जाता, किन्तु यहाँ स्वतन्त्रता का अर्थ यह लिया गया कि अब हमें कुछ करने-धरने की आवश्यकता नहीं। अब तो सर्वत्र केवल अधिकार-प्राप्ति की धुन है। जितने छोटे और बड़े सरकारी उद्योग-धन्धे हैं, सब के-सब करोड़ों के घाटे में हैं। पहले तो श्रमिक-वर्ग काम नहीं करता, फिर ऊपर के अफसर उस उत्पादन से भी हेराफेरी करके जेबें भरते हैं। कोई यह विचार करने को उद्यत नहीं है कि अन्ततः इस राष्ट्र का बनेगा क्या?

प्रत्येक वर्ग वेतन और भत्ता बढ़ाने की माँग किये जा रहा है, जबकि देश में करोड़ों व्यक्ति ऐसे हैं जिन्हें दो समय का भरपेट भोजन भी उपलब्ध नहीं है। हमें इस मनोवृत्ति को बदलना होगा। आज प्रत्येक राष्ट्रवासी को सोचना चाहिये कि अपनी आवश्यकता-पूर्ति के बदले में देश को मैं यदि कुछ देता नहीं हूँ तो देश पर भार हूँ और बिना कुछ प्रत्युपकार किये मुझे रोटी खाने और कपड़े पहनने का भी कोई अधिकार नहीं।

भगवान ने मनुष्य को बुद्धि दी है, ताकि वह अपनी कठिनाइयों को समझकर उन्हें दूर करने का उपाय सोचे। उसे हाथ और समर्थ शरीर इसलिए दिया है कि विचारी हुई बात को परिश्रम करके सफल बनाए। इस सम्बन्ध में वेद की महत्वपूर्ण शिक्षा है। यजुर्वेद के ४० वें अध्याय के दूसरे मन्त्र में परामर्श है कि- "कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः", अर्थात् 'मनुष्य कर्म करता हुआ ही सौ वर्ष तक जीने की इच्छा करे।' अथर्ववेद में उपदेश है- "कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः" - यदि पुरुषार्थ मेरे दाएँ हाथ में है, तो सफलता मेरे बाएँ हाथ का खेल है।

यो जागार तमृचः कामयन्ते यो जागार तमु सामानि यन्ति।
यो जागार तमयं सोम आह तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः॥ -ऋ. ५/४४/१४

'जो जागते रहते हैं, अर्थात् परिश्रम करते हैं, उन्हें ही ऋचाएँ चाहती हैं। जो परिश्रम करते हैं, उन्हीं के पास साम पहुँचते हैं, अर्थात् उनका ही सामवेद पढ़ना सार्थक है। जो उद्योगपरायण हैं, प्रभु उन्हीं का मित्र है।' ऋग्वेद ४/३३/११ में कहा है- "न ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवाः"- जो श्रम से थककर चूर नहीं हो जाते, देव उनके मित्र नहीं बनते।

ऐतरेय ब्राह्मण ७/१५ में बहुत सुन्दर विवेचन किया गया है-

नाना श्रान्ताय श्रीरस्ति, पापो नृषद्वरो जनः। इन्द्र इच्चरतः सखा ॥ चरैवेति चरैवेति..........

जो पूरी शक्ति से परिश्रम नहीं करते, उन्हें लक्ष्मी नहीं। आलसी मनुष्य पापी होता है। भगवान श्रम करनेवालों का मित्र बनता है। इसलिए श्रम करो, श्रम करो!

पुष्पिण्यौ चरतो जङ्घे, भूष्णुरात्मा फले ग्रहिः। शेरते अस्य पाप्मानः श्रमेण प्रपथे हताः ॥ चरैवेति..........

चलने वाले की जंघाएँ सशक्त होती हैं। जो सफलता मिलने तक काम में जुटे रहते हैं, उनकी आत्मा प्रतिभा-सम्पन्न होती है। परिश्रमी मनुष्य की समस्त त्रुटियाँ मार्ग में स्वतः समाप्त हो जाती हैं। इसलिए श्रम करो, श्रम करो!

आस्ते भग आसीनस्योर्ध्वस्तिष्ठति तिष्ठतः। शेते निपद्यमानस्य चरति चरतो भगः ॥ चरैवेति..........

बैठनेवाले का भाग्य भी बैठ जाता है, और जो खड़ा हो जाता है उसका भाग्य भी खड़ा हो जाता है। जो सो जाते हैं उनका भाग्य भी सो जाता है, और जो चलने लगते हैं उनका भाग्य भी चलने लगता है। इसलिए सदा परिश्रम करते रहो!

कलिः शयानो भवति, संजिहानस्तु द्वापरः। उत्तिष्ठंस्त्रेता भवति कृतं सम्पद्यते चरन् ॥ चरैवेति..........

सोने वालों के लिए सदा ही कलयुग है। जिन्होंने श्रम करने का विचार कर लिया, उनके लिए द्वापर प्रारम्भ हो गया। जो करने के लिए खड़े हो गए उनके लिए त्रेता आ गया, और जिन्होंने काम प्रारम्भ कर दिया उनके लिए सतयुग आ गया। अतः श्रम करो, श्रम करो!

चरन् वै मधु विन्दति चरन् स्वादुमुदुम्बरम्। सूर्यस्य पश्य श्रेमाणं यो न तन्द्रयते चरन् ॥ चरैवेति..........

श्रम से ही मधु प्राप्त होता है। परिश्रम से ही मधुर फल मिलते हैं। जो कभी आलस्य नहीं करता, उस सूर्य के तेज को देखो! अर्थात् सूर्य की गरिमा (तेजस्विता) उसकी निरन्तर गति के कारण ही है। इसलिए श्रम करो, श्रम करो!

आश्चर्य होता है, जिस समाज में पुरुषार्थ के लिए इतनी प्रेरणाप्रद विचार-सम्पत्ति हो, उसमें ये कर्महीनता के जघन्य विचार कैसे उत्पन्न हो गए? यहाँ अन्धकार का एक ऐसा समय आया जब समाज का बहुत बड़ा वर्ग दैव और भाग्य को ही सब-कुछ मानने लगा। ऐसे साधु और सन्त हुए जो समाज को निष्क्रियता का उपदेश करते रहे-

अजगर करै न चाकरी, पंछी करै न काम,
दास मलूका कह गये, सबके दाता राम।
अनहोनी होनी नहीं, होनी होय सो होय ॥

इन विचारों ने देश की बहुत बड़ी हानि की। समाज में भाग्यवाद इतना प्रबल हो गया कि लोग परिश्रम और पुरुषार्थ की ओर से उदासीन हो गए-

"भाग्य फलति सर्वत्र न च विद्या न च पौरुषम्"- विद्या और पुरुषार्थ बेकार हैं, जो भाग्य में लिखा है वही होना है।

शास्त्रीय दृष्टि से विवेचन किया जाय तो स्थिति यह है कि कर्म तीन प्रकार के होते हैं- क्रियमाण, सञ्चित और प्रारब्ध। वर्त्तमान में जो काम किया जा रहा है, वह 'क्रियमाण' कर्म हुआ, जैसे किसान खेत में बीज बोता है। बुवाई समाप्त होने के साथ क्रियमाण की अवधि भी समाप्त हो गई। आगे बोया हुआ बीज अंकुरित होकर फल पकने तक जिस स्थिति में रहता है, उस सब का नाम 'सञ्चित' है। सञ्चित का शब्दार्थ है- जमा। जो कर्म किया था, वह अभी जमा है, परिणाम देने की स्थिति में नहीं आया। इसके पश्चात् की अवस्था, जब किसान पकी हुई फसल काटकर, दाने निकालकर घर ले आता है, उसका नाम है 'प्रारब्ध'। प्रारब्ध का शब्दार्थ है, जो कर्म किया था उसका फल मिलना प्रारम्भ हो गया, अर्थात् किया हुआ कर्म जब फल देने की स्थिति में पहुँचता है, उसी का नाम प्रारब्ध, दैव या भाग्य है। अतः स्पष्ट है कि हम जैसा कर्म करेंगे, वैसा भाग्य बनेगा। यदि कुछ नहीं करेंगे तो कुछ नहीं बनेगा। अतः वेद ने पुरुषार्थ को ही मुख्यता दी है।

वर्त्तमान युग के महान् विचारक महर्षि दयानन्द ने अपनी मान्यताओं के दर्पण 'सत्यार्थप्रकाश' के 'स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश' के २५ वें नम्बर पर पुरुषार्थ की महत्ता निम्न शब्दों में व्यक्त की है-

"पुरुषार्थ प्रारब्ध से बड़ा इसलिए है कि जिससे सञ्चित प्रारब्ध बनते, जिसके सुधरने से सब सुधरते और जिसके बिगड़ने से सब बिगड़ते हैं, इसी से प्रारब्ध की अपेक्षा पुरुषार्थ बड़ा है।"

गोस्वामी तुलसीदास ने, लंका पर आक्रमण के समय जब राम समुद्र को देखकर दैव और भाग्य की बात करने लगे तो लक्ष्मण

द्वारा पुरुषार्थ के विषय में प्रेरक शब्द कहलाए हैं। लक्ष्मण ने कहा-

मारहु बाण सिन्धु करि सोषा। नाथ दैव करि कौन भरोसा॥
दैव दैव आलसी पुकारा। पुरुषारथ कर्त्तव्य हमारा॥

प्रारब्ध की अविचारित मान्यता के कारण ही फलित ज्योतिष का चक्र घूमा। इस भ्रान्ति ने भारत को बहुत बड़ी हानि पहुँचाई है। बख़्तियार ख़िलजी केवल ७० पठानों को लेकर बिहार प्रान्त का शासक बनकर बैठ गया। शत्रु के आक्रमण के समय भी जीत और हार के लिए मुहूर्त दिखवाते फिरना कितनी बड़ी मूर्खता का द्योतक है! राजनीति के महान् विद्वान् आचार्य चाणक्य ने कौटिलीय अर्थशास्त्र में लिखा है-

नक्षत्रमति पृच्छन्तं बालमर्थोऽति वर्तते। अर्थो ह्यर्थस्य नक्षत्रं किं करिष्यन्ति तारकाः॥

'काम के समय नक्षत्र और मुहूर्त छँटवानेवाले बालक हैं, ऐसे अबोधों को सफलता नहीं मिलती। जो काम जिन उपायों से बन सकता है, उनका अवलम्बन करना चाहिए। उस काम में ये आकाश के तारे क्या बनाएँगे तथा बिगाड़ेंगे?'

किसी शायर ने भी अच्छा कहा है-

अहले-हिम्मत मंजिले-मक़सूद तक आ ही गए। बन्दए-तक़दीर क़िस्मत का गिला करते रहे॥

इसके अतिरिक्त उपयुक्त शिक्षा के अभाव में समाज की दूषित रूढ़ियों ने भी श्रम की भावना को बड़ी हानि पहुँचाई है। हमारे सामाजिक ढर्रे में कुछ काम छोटे और अपमानजनक समझे जाते हैं और कुछ काम गौरवास्पद। प्रायः लकड़ी या चमड़े की दस्तकारी, कपड़े की बुनाई, सिलाई और धुलाई एवं स्थापत्यकला के काम, ये सभी समाज में हीन दृष्टि से देखे जाते हैं। परिणाम यह है कि चार अक्षर पढ़ने के बाद एक युवक अपनी परम्परा से चले आ रहे इन उद्योग-धन्धों में रुचि न लेकर छोटी-मोटी नौकरी खोजता फिरता है। इससे दुहरी राष्ट्रीय क्षति हो रही है। एक तो राष्ट्र के उत्पादन में कमी आती है, दूसरे राष्ट्र में बेकारों की संख्या बढ़ती चली जाती है।

अतः आवश्यक है कि सामाजिक वायुमण्डल और शिक्षा के माध्यम से भी इस प्रकार के विचार उभारे जाएँ कि श्रम का कोई काम छोटा और हीन नहीं है। हीनता का काम तो धोखा और छलछिद्र से पैसा कमाना है या निकम्मे रहकर राष्ट्र पर बोझ बनना है। श्रमिक व्यक्तियों का समाज में आदर और सम्मान बढ़ाना चाहिए, ताकि उस ओर प्रवृत होने के कारण युवकों में उत्साह हो।

अतः राष्ट्र को सुखी और समृद्ध बनाने के लिए वेद का पहला परामर्श है कि राष्ट्र में श्रम की प्रतिष्ठा होनी चाहिए। **क्रमशः ....**

- पं. शिवकुमार शास्त्री
(साभार- श्रुति सौरभ)

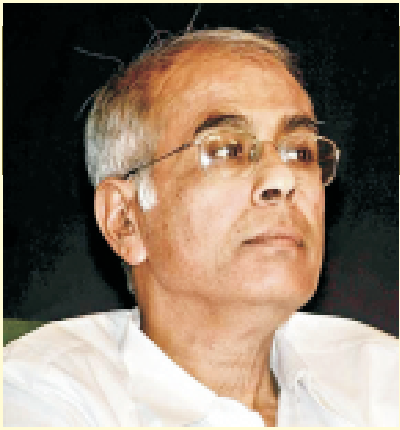

आत्म निवेदन

सबसे बड़ा शत्रु अज्ञान

एक साथ दो खबर पढ़ने को मिलीं मन विषाद से भर गया। यूँ देखा जाए तो दोनों समाचारों का आपस में कोई संबंध नहीं है। परन्तु हमारा यह मानना है कि दोनों घटनाओं के पीछे कारक एक ही है और वह है समाज के अन्दर अन्धश्रद्धा और अन्धविश्वास का दृढ़ता से कदम जमा लेना। एक तरफ एक विख्यात् सन्त के द्वारा सोलह वर्षीय लड़की के यौन शोषण का समाचार तथा दूसरी ओर अपने चिकित्सा व्यवसाय को भी तिलांजलि देकर गत बीस सालों से 'अन्धश्रद्धा निर्मूलन समिति' की स्थापना कर उसके माध्यम से समाज में व्याप्त अन्धविश्वास, काला जादू, जादू टोना और ऐसी ही समस्त कुरीतियों को जड़ मूल से उखाड़ने के संकल्पवीर डॉ. नरेन्द्र दाभोलकर की कायरतापूर्ण हत्या। इन दोनों घटनाओं के पीछे 'अज्ञान' कारक है। अज्ञान-जन्य स्वार्थ ने ही डॉ. दाभोलकर की नृशंस हत्या की तो इसी अज्ञान-जन्य अन्धश्रद्धा ने आसाराम बापू को सर्व-शोषण का हथियार दिया। धर्म के नाम पर स्वार्थी तत्त्वों द्वारा नाना प्रकार के बाह्य आडम्बरों की संरचना का क्रम जब एक बार चल पड़ा तो इस लहराती आत्मघाती नदी की डूब में अपने को आने से रोकने वाले विरले ही लोग रहे। इस प्रबल धारा के वेग को रोकने का साहस जागरूक समाज सुधारक भी नहीं कर पाए और उन्होंने इस ओर चुप्पी साधना ही श्रेयस्कर समझा।

१९वीं शताब्दी में महर्षि दयानन्द सरस्वती ने धर्म के सच्चे स्वरूप को प्रस्तुत करते हुए पार्थिव उपासना और इससे जुड़े अन्धविश्वासी क्रियाकलापों, अवतारवाद, चमत्कारवाद का तर्क के धरातल पर जाकर प्रबल विरोध किया। एक ऐसी आँधी तर्क की चली जिसने ऐसे विश्वासों की नींव को हिलाकर देश को सत्य सूर्य के दर्शन कराये। इन सब अन्धविश्वासों के मूल में कुलबुलाते पाप क्षमा सिद्धान्त को ऋषि दयानन्द ने पूर्णतः ध्वस्त कर दिया। परन्तु स्वार्थी तत्त्वों ने सच्चाई को कब आसानी से उन्मुक्त होने दिया है। गैलीलियो, ब्रूनो, सुकरात और न जाने कितने सत्यशोधकों को षड्यन्त्र के हलाहल का पान करना पड़ा। ऋषि दयानन्द का बलिदान भी इन्हीं तत्त्वों द्वारा किए गए षड्यन्त्र के फलस्वरूप हुआ। ऋषि दयानन्द ने अपने द्वारा स्थापित आर्य समाज से पाखण्ड खण्डन का कार्य निरन्तर करते रहने की आशा की और आर्य समाज के प्रारम्भिक समय में जान पर खेलकर भी हमारे शूरवीर पूर्वजों ने सत्य के दीपक को जलाये रखा। आज स्थिति बहुत परिवर्तित हो गई है। ऋषि की फहरायी पाखण्ड-खण्डनी पताका को अब सबल दण्ड और सबल हाथों की अपेक्षा है। परन्तु उनकी उपस्थिति दूर-दूर तक दिखाई नहीं देती। कारण, सत्याधारित इस समाज में भी स्वार्थ का विषधर फन फैलाकर खड़ा हो गया। अन्धविश्वास को निर्मूल करने के संबंध में आर्य समाज में जो पद्धति आज है वो मंच और कलम तक सिमट गई है। आधुनिक वैज्ञानिक चिन्तन के समय में अन्य प्रकार अपनाने बहुत आवश्यक हैं।

हमने अपने पुराने किसी निवेदन में दो संस्थाओं की चर्चा की थी। जो आर्य समाज से संबंधित तो नहीं परन्तु पाखण्ड-खण्डन के क्रम में असरदार तरीके से कार्य कर रही हैं। उनमें से एक श्री सनत के नेतृत्व में 'रेशनल सोसायटी ऑफ इंडिया' तथा दूसरे 'अन्धश्रद्धा निर्मूलन समिति' जिसके संस्थापक अध्यक्ष की निर्मम हत्या की बात से हमने अपना यह आलेख आरम्भ किया है। डॉ. दाभोलकर जहाँ पूर्णकालिक रूप से ऐसे सभी ढोंगी मठाधीशों के खिलाफ असरदार ढंग से कार्य कर रहे थे वहीं जनता में व्याप्त अन्धश्रद्धा के चलते हुए उपरवर्णित सन्त धन, यश और सम्मान के स्वामी तो बन गए परन्तु वस्तुतः नैतिक आधारों पर उनकी हैसियत निकृष्टतम सोपान पर है। डॉ.दाभोलकर महाराष्ट्र सरकार से कानून बनवाने के लिए प्रयासरत थे जिसके द्वारा ऐसे सभी लोगों पर अंकुश लगाया जा सके जो लोगों को बहकाकर, गलत प्रलोभन देकर, तांत्रिक अनुष्ठानों को सम्पन्न करके या अन्य किसी प्रकार की प्रक्रियाओं को अपनाकर धर्म का धन्धा कर रहें हैं उनको नियमित किया जा सके। परिणाम उनके बलिदान के रूप में हमारे समक्ष आया। समाज के जागरूक सदस्यों को निश्चित रूप से वहाँ से प्रारम्भ करना चाहिए जहाँ से डा.दाभोलकर छोड़ कर गए हैं।

वस्तुतः भारतीय समाज में एक ऐसे जड़त्व का प्रादुर्भाव हो चुका है जहाँ आस्था के नाम पर किए जा रहे किसी भी कार्य की संवीक्षा से हम बचना चाहते हैं। ऐसे प्रकरणों में तर्क का और सामान्य बुद्धि का प्रयोग भी हम वर्जित मानते हैं। संभवतः इसलिए कि इन कृत्यों को करने वाले व्यक्ति क्योंकि उनके साथ हजारों की संख्या में लोग खड़े हुए हैं, इसलिए क्या पता वे धर्म के सच्चे प्रतिपादक हों और उनकी बुराई करने से हमारा कुछ अनिष्ट हो जाय प्रायः ऐसा सोचा जाता है। ऐसी मानसिकता हमें तब स्पष्ट दिखाई देती है जब रामपालदास जैसा जूनियर इंजीनियर की नौकरी से रिटायर व्यक्ति अनेक प्रकार के लाभ दिलवाने का लालच देता हुआ एक सन्त के रूप में हमारे सामने आता है और हम उसके व्यक्तित्व की समीक्षा कर सत्य निर्णय से बचने का प्रयास करते हैं। अनेक तथाकथित सन्त अब तक हमारे समक्ष ऐसे रूप में आ चुके हैं जिन्होंने श्रद्धालुओं की आस्था का अनुचित लाभ उठाकर बलात्कार जैसे जघन्य कांड किए। जेल भी गए और आश्चर्य तब कि बाहर निकलकर उनको भी महामण्डलेश्वर की पदवी अन्य सन्त दे देते हैं। ऐसे सारे

लोग न सन्त कहलाने के लायक हैं न धर्म से इनका दूर-दूर तक का कोई वास्ता हैं। इसे जब तक हम नहीं समझेंगे तब तक समाज में यह तत्त्व भी उन लोगों की जमात में शामिल रहेगा जो कि हर हथकण्डे अपनाकर दूसरों का शोषण करते हैं। विचार करें कि यदि बालिका के माता-पिता तंत्र-मंत्र में विश्वास रखने वाले अन्धविश्वासी न होते तो आसाराम जी को दुष्कर्म का अवसर ही न मिलता। आसाराम जी के संदर्भ में जाँच रिपोर्ट का क्या नतीजा निकलेगा यह तो समय बतायेगा परन्तु स्थान विशेष पर अपनी उपस्थिति बाबत ही तीन तरह के बयान देकर वे साबित कर चुके हैं कि कहीं कुछ गड़बड़ अवश्य है। इन्हीं तथाकथित सन्त का एक वीडियो हमने पूर्व में देखा था जिसमें एक स्टिंग ऑपरेशन के तहत आर्थिक अपराधों से भागी एक विदेशी युवती को अपने यहाँ छुपाने में इन्होंने कोई झिझक व्यक्त नहीं की। यहाँ सवाल सन्त विशेष का नहीं है, मानसिकता का है। एक तरफ हम डॉ., प्रोफेसर, इंजीनियर इत्यादि के रूप में अपने को विशेष बुद्धि सम्पन्न मानते हैं परन्तु दूसरी ओर अगर कोई मदारी के रूप में हाथ घुमाकर कोई वस्तु हमारे समक्ष उपस्थित कर देता है तो वहाँ हमारी सारी बुद्धि घास चरने चली जाती है। यही कारण है कि अच्छे-अच्छे बुद्धिवादी प्रखर राजनेता ऐसे लोगों के चरणों में बैठे नजर आते हैं और जब ऐसे उच्च स्तरीय व्यक्ति भी तथाकथित सन्तों से मंत्रादि लेकर स्वयं को दीक्षित करने की लाइन में लग जाते हैं तो जनसाधारण यह सोचकर कि इतने बड़े-बड़े लोग इस बाबा पर श्रद्धा रखते हैं तो यह कैसे गलत हो सकता है? नतीजतन वे भी भीड़ में सम्मिलित हो जाते हैं।

भक्त को अपना शरीर, प्राण और यहाँ तक कि अपनी पत्नी भी 'गुरू' को अर्पण कर देनी चाहिए।

(- श्री आसाराम रचित श्री गुरुगीता श्लोक ३८)

मैं यह नहीं कहता कि सारे सन्त फ्राड हैं परन्तु हाँ, आज जब ऐसे सन्तों को राजसी वैभव व ठाठबाट में डूबा देखते हैं, दुनियाभर के आडम्बरों में रत् देखते हैं तो लगता यही है कि सन्तधर्म से इनका दूर-दूर तक वास्ता नहीं। एक समय था जब भारत का संन्यासी छोटी सी पर्ण-कुटी में ईश्वर के सानिध्य में सत्य के दर्शन करता था और कौपीन मात्र में सर्दी-गर्मी के द्वन्द को सहते हुए भी जन साधारण का मार्ग प्रदर्शित करता था, वहाँ आज के साधुगण जिनके लिए मेलों में ऐसे-ऐसे तम्बुओं की संरचना की जाती है जहाँ राज दरबार भी शरमा जाए तो हमारे मन में प्रश्न अवश्य उठते हैं। दूरदर्शन पर लच्छेदार भाषण देते हुए, वैराग्य का उपदेश देते हुए, माया को महाठगनी बताते हुए ये लोग स्वयं स्टूडियो में आने से पहले नाना प्रकार के मेकअप का प्रयोग अपने ऊपर इस भावना से करवाते हैं कि उनके वक्तव्य के साथ उनके व्यक्तित्व का भी प्रभाव लोगों पर पड़े तो हमारे मन में संदेह उपजते हैं।

आर्यसमाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द जी महाराज समाज में सन्तों संन्यासियों की आवश्यकता को रेखांकित करते हुए कहते हैं कि समाज में संन्यासी की आवश्यकता उसी प्रकार है जिस प्रकार शरीर में सिर की आवश्यकता होती है क्योंकि जो समस्त ऐषणाओं से ऊपर उठ चुके हैं, संसार का धन, वैभव, प्रतिष्ठा जिनके लुभाने की वस्तु नहीं रह गई है, आत्मा की अजरता-अमरता को जान मृत्यु का भय जिनको स्वप्न में भी नहीं सताता, ऐसे निर्भीक, निष्कपट, वीतराग संन्यासी सत्योपदेश के द्वारा सत्यमार्ग का परिचय, सही जीवन पद्धति का उपदेश जन सामान्य को करते हैं। पूर्णतः सांसारिक राग-द्वेष व वैभव में लिपटे सन्तगण जो व्याख्यान भी बुलेटप्रूफ केबिन से देते हों उक्त कार्य को कभी नहीं कर सकते। केवल अपने-अपने हथकण्डों से, चतुराई से, होशियारी से, वक्तव्य कला से, लोगों की कामनाओं को अनायास पूरी करने के प्रलोभन से, अपने को स्थापित करने वाले ये लोग केवल भ्रमित ही करते हैं और स्वयं का घर भरते हैं।

यूँ तो हमने देखा कोई घटना होती है, हमारे देश में कुछ दिन, कुछ सप्ताह उसकी चर्चा रहती है फिर सब कुछ सामान्य हो जाता है। परन्तु हमें यदि मानव जीवन के रूप में मिले इस अमूल्य अवसर को अपनी चिरलक्षित यात्रा के साधन के रूप में परिणित करना है तो जागना तो पड़ेगा। आएँ धर्म के सच्चे स्वरूप को समझें। धर्म के नाम पर जितने भी पाखण्ड हैं उनका समूल नष्ट करने में जुट जायें क्योंकि बौद्धिक सर्वनाश सबसे बड़ी चोट होती है। हम कैसे सोच सकते हैं कि आज धर्म के नाम पर बलि देकर किसी के जीवन को नष्ट किया जा सकता है, किसी मासूम का सिर काटा जा सकता है, प्रतिमाएँ दूध पी सकती हैं, अश्रुपात कर सकती हैं, स्थान विशेष मोक्षदायी हो सकता है? अन्त में एक बात और अगर हम अन्धविश्वास के संदर्भ में एक तर्कहीन बात को मानते हैं तो दूसरी से भी इंकार नहीं कर सकते। सृष्टि में सृष्टिक्रम से विरुद्ध कुछ भी होना असंभव है। हम ध्यान रखें सृष्टि के नियमों के अनुसार ही कार्य होते हैं। अगर इससे विपरीत कहीं कुछ हो रहा है तो उसके पीछे कोई न कोई जालसाजी है। परन्तु यह भी है कि ऐसे संस्कार देने वाला परिवेश बचपन से ही जब तक प्राप्त नहीं होगा तब तक कुरीतियों के बीज कब हमारे हृदय में स्थान बनाकर उग आयेंगे हम नहीं कह सकते। इसीलिए महर्षि दयानन्द जी महाराज ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में स्पष्ट लिख दिया कि बचपन से ही बालक के मस्तिष्क का विकास इस प्रकार किया जाए कि वे चमत्कारी, तर्कहीन, सृष्टिक्रम से विरुद्ध बातों पर विश्वास नहीं करे। जब हमारा मानस ऐसा हो जायेगा तो भोग विलासी सन्त भी आप देखेंगे कि हमारे मध्य से गायब हो जायेंगे।

अशोक आर्य
०९००१३३९८३६, ०९३१४२३५१०१

वीजा अन्धविश्वास कैसे-कैसे?

वीजा (Ouija) खेल से कितने लोग परिचित होंगे मैं कह नहीं सकता । इसलिए इसका संक्षिप्त परिचय देना उपयोगी समझता हूँ। इस खेल का प्रबंधक जिसे 'माध्यम' कहा जाता है, प्रेतात्माओं से संपर्क साधने और उनसे समस्याओं के समाधान की जानकारी पाने का दावा करता है। व्यक्तिगत तौर पर मैं इसमें रत्ती भर भी विश्वास नहीं करता, और इसी कारण इसे एक खेल कहता हूँ। कुछ लोग इस खेल को प्लांचेट (प्लांशेट, Planchette) रीडिंग के नाम से भी पुकारते हैं ।

इसमें लकड़ी या गत्ते का एक समतल बोर्ड, आम तौर पर गोलाकार, प्रयोग में लिया जाता है, जिसके चारों ओर अक्षर (अंग्रेजी) एवं अन्य लिपिचिह्न लिखे रहते हैं। बोर्ड पर लकड़ी से बनी एक छोटी तिपाई रखी रहती है। प्रेतात्माओं का आह्वान करने वाला 'माध्यम' दो-तीन अन्य व्यक्तियों के साथ इस तिपाई को अपनी-अपनी एक अंगुली से स्पर्श करते हैं। जब 'माध्यम' का प्रेतात्मा से संपर्क स्थापित हो जाता है, तो उससे मनोवांछित प्रश्न पूछा जाता है । उक्त तिपाई बोर्ड पर लिखित अक्षरों पर बारी-बारी से भ्रमण करने लगती है । इन अक्षरों से सार्थक शब्द अथवा वाक्य बनते हैं जिनकी व्याख्या पूछे गए प्रश्न के उत्तर के तौर पर की जाती है। मेरा ख्याल है कि प्रेतविद्या में दिलचस्पी रखने वालों ने इसके अपने-अपने संस्करण ईजाद किए हैं । आस्थावानों के अनुसार तिपाई की गति का कारण आहूत प्रेतात्मा होती है।

इस स्थल पर मैं वीजा के खेल से जुड़े अपने एक अनुभव का ब्योरा पेश कर रहा हूँ। घटना बहुत पुरानी है। उसे घटे करीब तीस साल बीत चुके होंगे। मैं सपत्नीक अपने एक रिश्तेदार से मिलने उनके घर गया था। वहाँ बीस एक वर्षीय उनका युवा भतीजा परिवार के अन्य सदस्यों के साथ वीजा के खेल में व्यस्त था। घर के सदस्यों की बातों से मुझे प्रतीत हो रहा था कि वे उसकी इस विद्या और उसकी सफलता के कायल थे। उसने वीजा के लिए दफ्ती के बोर्ड और उसके साथ एक उलटी रखी गई छोटी कटोरी का प्रबंध कर रखा था। कुछ देर तक मैं उसके 'तमाशे' को देखता रहा। उसका दावा था कि वह 'लार्ड राम' का आह्वान करता है। किंचित् काल देखते रहने के बाद मुझे भी कुछ जिज्ञासा हुई। दरअसल एक सवाल मेरे दिमाग में भी घूम रहा था। उन दिनों टेलीफोन की सुविधा आम आदमी के पहुँच से बाहर थी। गाँव-देहात के लोगों से सम्पर्क का साधन चिट्ठीपत्री ही हुआ करती थी । तब मेरे वृद्ध पिताजी उत्तराखण्ड (उस समय उत्तर प्रदेश) के पुश्तैनी गाँव में रहते थे। एक लम्बे अर्से से मुझे उनके कुशल-क्षेम का पत्र नहीं मिला था। मेरे मन में विचार उठा कि देखूँ यह युवक क्या जवाब देता है। मैंने पूछा, 'प्रेतात्मा से संपर्क साधने के तुम्हारे इस कार्य में कम से कम कितने लोगों की जरूरत पड़ती है ?'

'कम से कम दो जने तो होने ही चाहिए ।' जवाब मिला ।

'केवल तुम और मैं मिलकर प्लांचेट रीडिंग करें तो क्या मेरे सवाल का जवाब मिल सकता है ?'

'हाँ, बिल्कुल मिलेगा ।'

मैंने उसे अपनी समस्या बताई और हम दोनों जुट गये वांछित कार्य में। विज्ञान (फिजिक्स) का अध्येता होने के कारण मैंने सोचा कि मैं कटोरी को तो छुऊँगा, लेकिन उस पर किसी प्रकार से अपना बल नहीं लगाऊँगा। अपनी एक अंगुली मैंने कटोरी पर ऊपर से नीचे की ओर हलके-से छुआ दी। इसके बाद वह अपने इष्टदेव लार्ड राम का आवाहन करने लगा। काफी प्रयास के बावजूद कटोरी बोर्ड पर इधर-उधर नहीं घूम सकी और मुझे मेरे सवाल का जवाब नहीं मिल सका।

इस असफलता पर वह युवक काफी व्यथित लग रहा था। संभव कारण क्या हो सकते हैं यह पूछने पर उसने कहा, 'मैं यह सवाल लार्ड राम से ही पूछ लेता हूँ।'

और उसने मुझे छोड़ वहाँ मौजूद अन्य जनों के साथ पुनः 'प्लांशेट रीडिंग' का कार्य संपन्न किया। उसे जो उत्तर मिला वह मेरे लिए दिलचस्प था। उसके कथनानुसार लार्ड राम ने उसे बताया चूंकि मैं 'आस्थाहीन' व्यक्ति हूँ, अतः मेरे भाग लेने पर प्लांचेट रीडिंग से संबंधित आह्वान वे स्वीकार नहीं कर सकते।

'आपको प्लांचेट रीडिंग में आस्था नहीं है, इसलिए यह सफल नहीं हो सका।' उसने असफलता का कारण समझाया।

'हाँ, बात तो सही है, मुझे इन बातों में विश्वास नहीं है। ऐसा कोई अनुभव आज तक हुआ भी नहीं जो विश्वास जगा सके।' मेरा प्रत्युत्तर था ।

'लेकिन बिना विश्वास के तो यह सफल नहीं हो सकता है।'

'ठीक है, लेकिन बिना समुचित कारण एवं अनुभव के विश्वास भी तो नहीं जग सकता। है न? विश्वास ऐसी चीज तो है नहीं कि किसी ने कहा हम मान गये। कम से कम मेरे जैसे वैज्ञानिक पृष्ठभूमि वाले व्यक्ति के लिए ऐसी बातें आसानी से स्वीकार कर पाना संभव नहीं। दरअसल यह पूरा मामला 'पहले अण्डा कि पहले मुर्गी' का है। ठीक ?'

और बात वहीं खत्म हो गयी। अधिक बहस की मुझे गुंजाइश लगी भी नहीं।

योगेन्द्र जोशी

'अमृत रस बरसे जग चखने को तरसे'

- देवनारायण भारद्वाज

'माताजी रोज सुबह घर में हवन करती थीं और एक बड़े पीतल के गिलास में से पानी लेकर आचमन करती थीं। वह पीतल का गिलास उनके जीवन में सदा याद दिलाता था कि कैसी-कैसी मुसीबतें आती हैं, जाती हैं, घबराना नहीं चाहिए।' यह पंक्तियाँ उद्धृत की गई हैं अस्सी वर्षीय आर्य संन्यासी स्वामी बलराम निर्वृत्तानन्द सरस्वती जी के लेख से जो आर्य वानप्रस्थ आश्रम ज्वालापुर(हरिद्वार) की मासिक पत्रिका 'स्वस्ति पन्थाः' के अप्रैल २००७ के अंक में छपा है। इस लेख में उन्होंने पूज्य पिता स्वर्गीय जगतराम सेठी के आर्य बनने की कहानी सुनायी है कि किस प्रकार वे भारतीय स्वाधीनता संग्राम, आर्य समाज के प्रगति-अभियान, स्त्री-शिक्षा और अछूतोद्धार के क्रान्तिकारी आन्दोलन में अपने युवाकाल से ही व्यस्त हो गये थे, और हर प्रकार के अभावों व संघर्षों को झेलते हुए न केवल सफल ही हुए थे, प्रत्युत् अमृतत्व के पद के अधिकारी भी बन गए थे। उक्त पत्रिका मेरे हाथ में आयी और जब-जब मैंने इस लेख को पढ़ा, मेरी आँखें आँसुओं से डबडबा गयीं। यदि मैं उस अमरगाथा को यहाँ पर दोहराने बैठ गया तो यह लेख तो उसी से भर जायेगा, जिसे इच्छुक पाठकगण उस पत्रिका से पढ़ सकते हैं। यहाँ पर तो हमें यह दिखाना है कि जो लोग हवन करते हैं और अमृत के आचमन करते हैं, वे इस अमृत को चख पाते हैं- छक पाते हैं, या यूँ ही पीकर छोड़ देते हैं।

'ओं अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा। ओं अमृतापिधानमसि स्वाहा। ओं सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा॥' यह ध्वनि कहाँ गुञ्जायमान होती है? आर्य समाज मंदिर में या वहाँ जहाँ कोई आर्य आवास है- चाहे वह प्रासाद है, घर है या कुटिया है। धन्य हैं महर्षि दयानन्द, धन्य है उनकी पञ्चमहायज्ञ प्रणाली और धन्य है उनकी संस्कार विधि, जिसने इस अमृतवर्षा की रसधार-फुहार को सर्वत्र सहज सुलभ कर दिया है। नीचे अमृत का आधार ऊपर अमृत का आवरण बीच में आचमनकर्ता के साथ है- सत्य, यश, श्री एवं शोभा का साम्राज्य। हथेली में भरकर जल का पान तो बहुत लोग कर लेते हैं, पर क्या वे सभी इस आचमन के अमृतरस का आभास कर पाते हैं?अधिकांश तो 'सर्वं वै पूर्णं स्वाहा' बोलकर उठ जाते हैं और अमृतरस को यज्ञवेदी पर ही छोड़कर चले आते हैं, तथा प्रतिदिन के अपने काम धन्धे में लग जाते हैं। वेद माता हमें पग-पग पर इस अमृत रसपान के लिए प्रोत्साहित करती है। आइये सुनें:-

अमृतं जातवेदसं तिरस्तमांसि दर्शतम्।
घृताहवनमीड्यम्॥ ऋग. ८/७४/५

अर्थात् हे ज्ञानी जनो! (अमृतम्) अनश्वर व मुक्तिदाता (जातवेदसम्) जिससे सर्वविद्या, धन आदि उपजे हैं और हो रहे हैं

जो (तमांसि तिरः) अज्ञानरूपी तम को दूर करने वाला है। (दर्शतम्) दर्शनीय (घृताहवनम्) घृतादि पदार्थदाता और (ईड्य)वन्दनीय है- उसकी कीर्ति गाओ। कीर्ति गाओ और उसे जीवन में अपनाओ। जो आचमन के जल का पान और इस अमृत का अनुपान कर लेता है, वह यज्ञवेदी से रीता नहीं, जीता-जागता और चमकता हुआ उठता है। इनमें से कुछ तो ऐसे महापुरुष बन जाते हैं जो अपने व्यक्तित्व, कृतित्व एवं वक्तृत्व के द्वारा इतने ऊँचे उठ जाते हैं, जो सूर्य-चन्द्र की भाँति इतिहास के आकाश में छा जाते हैं। कोई उन्हें बिना देखे रह नहीं सकता। पर कुछ ऐसे तारागण होते हैं, जो अपने-अपने क्षेत्र में ध्रुव, मंगल, बुध, वृहस्पति की भाँति यथोचित ज्ञान प्रभावान तो होते हैं, किन्तु उन्हें गहन ध्यान से ही देखना पड़ता है।

इनसे मिलिये- यह हैं श्रीचन्द्रपाल गुप्त, जो इन्हीं में से एक हैं। जिनके जीवन में यज्ञ-अमृतरस की वर्षा हुई है। गुप्त जी चौरासी वर्ष की आयु में भी युवा प्रतीत होते हैं। अलीगढ़ नगर में पंजाब नेशनल बैंक की प्रथम शाखा का उद्घाटन २२ जुलाई १९४३ को हुआ। हाईस्कूल की परीक्षा दे चुके गुप्त जी उद्घाटन समारोह के अवलोकनार्थ बैंक स्थल पर पहुँच गए। एक लिपिक को अत्यधिक व्यस्त देखकर लेखन कार्य में उसकी सहायता करने लगे। बिना भोजन किए दिनभर कार्य में लगे रहे। हाँ, बीच-बीच में उद्घाटन के लड्डू अवश्य मिलते रहे। अत्यन्त परिश्रमी जानकर उच्चाधिकारियों ने इनकी बैंक सेवा में नियुक्ति कर दी। चार वर्ष बाद भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हो गई। स्वतंत्रता दिवस समारोह में भाग लेने के लिए चार दिन का राष्ट्रीय स्तर पर अवकाश घोषित हुआ। बैंक प्रबन्धक ने पिछले अवशेष कार्य को पूर्ण करने के लिए सभी कर्मचारियों को मुख्यालय छोड़ने की अनुमति नहीं दी। राष्ट्रीय भावनाओं से

ओतप्रोत गुप्त जी अवकाश में न केवल समारोह में भाग लेने दिल्ली गए प्रत्युत् उन्होंने राष्ट्रीय पर्व की उपेक्षा का परिवाद भी शासन स्तर पर कर दिया। फलस्वरूप गुप्त जी को निलम्बित कर दिया गया। पुनःस्थापना के लिए चलते-चलते इनका अभियोग सर्वोच्च न्यायालय तक पहुँच गया और दस वर्ष बीत गए। बैंक अध्यक्ष एवं चन्द्रपाल गुप्त को परस्पर समझौता करने के लिए तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश महोदय ने प्रेरित किया।

अब बात अमृतरस के परीक्षण की आ गई। मुख्य न्यायाधीश ने गुप्त जी को कहा कि इस दस वर्ष के अन्तराल में आपको जितने धन की हानि हुई हो वह बता दीजिए। उसकी क्षतिपूर्ति करते हुए आपको सेवा में ले लिया जाये। गुप्त जी ने कह दिया- मुझे कोई हानि नहीं हुई है, क्योंकि मैंने अपने परिश्रम से बस-परिवहन का व्यवसाय कर लिया था, मुझे तो सेवा में रख लिया जाये-यही पर्याप्त है। बैंक के अध्यक्ष ने वक्तव्य दिया- मुख्य न्यायाधीश महोदय! आप इन्हें क्षतिपूर्ति चाहे जो दिलवा दें। मुझे इन्हें सेवा में नहीं रखना। मुख्य न्यायाधीश श्री गुप्त की ईमानदारी व सत्यवादिता से प्रभावित थे। वे बोले- बैंक अध्यक्ष महोदय! आपको गुप्त जी को सेवा में तो रखना ही है। यदि आप स्वेच्छा से रखते हैं तो ठीक है, अन्यथा इनके वेतन के अनुसार क्षतिपूर्ति करते हुए गुप्त जी की पुनःस्थापना का आदेश मेरे द्वारा पारित कर दिया जायेगा। इसके विचार के लिए बैंक अध्यक्ष को कुछ मिनट दिए गए। वे मिनट बीत जाते इससे पूर्व ही बैंक अध्यक्ष ने कह दिया- हाँ ठीक है, और गुप्त जी फिर से सेवा में आ गये। दीर्घकालिक पूर्ण सेवा के बाद इन्होंने अवकाश ग्रहण किया। इनकी अर्द्धांगिनी के पितामह ने महर्षि दयानन्द के दर्शन किए थे जो दैनिक याज्ञिक आजीवन रहीं। इस अमृत रसपान का ही परिणाम है कि गुप्त जी आर्य समाज में प्रेरणास्रोत व आदरणीय माने जाते हैं।

इस आचमन अमृतरसपायी स्वर्गीय होतीलाल नागर की कहानी कोई नहीं जान पायेगा, क्योंकि उन्हें तो रेलवे का चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी समझ कर साधारण रूप में ही छोड़ दिया जायेगा। आर्य समाज का सत्संग, सत्यार्थ प्रकाश का पाठ और उसकी कथा करना-यह उनका दैनिक कर्तव्य था। प्रातःकाल उस बड़े उद्यान में सत्यार्थप्रकाश लेकर पहुँच जाते थे, जहाँ नगर के संभ्रान्त नागरिक बड़ी संख्या में भ्रमण को आते थे। वहाँ अनेक लोग इनके इस पाठ-संवाद का लाभ उठाते थे, शंका समाधान करते थे। नागरजी अपार यज्ञप्रेमी थे। होली, दीवाली व अन्य पर्वों पर बड़े पारिवारिक यज्ञ में जनसमूह को बुला लेते थे। लगभग पच्चासी वर्ष की आयु तक सक्रिय बने रहे। इनकी मृत्यु का दृश्य भी दुर्लभ और अद्भुत है। इस दिन इन्होंने 'ओ३म्' स्मरण व उच्चारण की झड़ी लगा दी। अपने बड़े पुत्र को पास बैठाया, और उसकी गोद में सर रखकर लेट गए। उनसे कहा कि मेरे साथ 'ओ३म्' बोलो। एक बार, दो बार और तीसरी बार ओ३म् ध्वनि के साथ प्राण त्यागकर अपनी आत्मा को अमृतमयी परमात्मा की गोद में समर्पित कर दिया। किसे मिलेगा अपने प्राणप्यारे से मिलने का इतना सुन्दर शुभावसर, उसी को जिसने अमृतरस का पान किया होगा।

यत्किंचित विस्तारभय के बाद भी यह लेखनी वय विद्यावृद्ध पचासी वर्षीय वैद्य विजयगुप्त कौशिक के अमृतरसपान की चर्चा का लोभ संवरण नहीं कर पा रही है। आर्यजगत् को उनकी प्रेरणाओं से लेखक ही परिचित नहीं करायेगा तो कौन करायेगा? आज वे कविराज हैं, वैद्यराज हैं, हिन्दी प्रवक्ता पद से सेवानिवृत्त हैं। निज पुत्र-पुत्रियों को सुयोग्य शिक्षित आत्म निर्भर करते हुए समाज में अपना प्रतिष्ठित स्थान बनाया है। उनका कथन है- मनुष्य जन्म लेता है, मर जाता है- कोई सत्कार्य की प्रेरणा नहीं छोड़ जाता है, तो पशु और उसमें अन्तर ही क्या है? सहसवान(बदायूँ) में जन्मे तब के ज्ञानचन्द्र के पिता की छाया बचपन में ही उठ गई थी। बच्चों को पढ़ा-पढ़ाकर अपनी पढ़ाई की। अग्रज सिद्धहस्त वैद्य इनको खरल में जड़ी बूटी कुटवाने तक ही सीमित रखना चाहते थे। एक दिन इन्होंने अग्रज से शिक्षा में सहायता की बात क्या कह दी, उन्होंने इनसे सर्व संबंधविच्छेद की घोषणा कर दी। आर्य समाज के यज्ञ-अमृतरस का पानकर धवल विमल सुन्दर छवि का यह ब्रह्मचारी ओ३म् 'मेरे सोम, मेरे प्राण, जीवन व्योम' गाते हुए सहसवान के चौराहे पर प्रभु-पथ प्रतीक्षा में आकर खड़ा हो गया। पीछे से इनके कन्धे पर एक हाथ का स्पर्श हुआ- महाशय ज्ञान चन्दर!मेरे बच्चों को पढ़ा दिया करो-यह लो अग्रिम राशि पठन-पाठन-प्रबन्ध के लिए। ज्ञानचन्द्र ने पीछे मुड़कर देखा, तो उन डॉक्टर महोदय को नमस्ते करके अभिवादन किया, कन्धे पर जिनका हस्तस्पर्श हुआ था। सचमुच वह प्रभुहस्त का स्पर्श ही था जो इनके जीवन का आधार स्तम्भ सिद्ध हुआ। पढ़ते-पढ़ाते उच्च शिक्षा प्राप्त की, सम्मानजनक सेवा पद प्राप्त किया। और सर्वाधिक महत्वपूर्ण यह कि कन्या गुरुकुल सासनी की ब्रह्मचारिणी चन्द्रप्रभा जी इनकी सहधर्मिणी बनीं। 'स्मृतिशतक' 'गीतागुञ्जन' एवं 'उद्घोष' नामक काव्य संकलन का हिन्दी साहित्य में एक स्थान विशेष रहेगा ही पर महानगर एवं समीपस्थ क्षेत्रों में आयोजित, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक सभा- समारोह वैद्य विजयगुप्त कौशिक की वक्तृता बिन अपूर्ण समझे जाते हैं। ये तीन ही नहीं और भी बहुत हैं, जिन्होंने इस यज्ञ आचमन के अमृतरस को चखकर स्वजीवन को देदीप्यमान किया, पर इनसे कई गुना अधिक वे हैं जो आचमन तो करते रहते हैं, नित्य-नित्य अनेक बार करते हैं, किन्तु वह उनके लिए अमृतरस सिद्ध नहीं हो पाता है, कहीं हम भी तो उन्हीं में नहीं हैं। आइये विचारें और आगे इस यज्ञ अमृतरस के स्वागत के लिए तैयार हो जायें। इन अशरीरी यशस्वी अमृत आत्माओं की श्रद्धाञ्जलि।

वरेणयम्, अवन्तिका १, रामघाट मार्ग,
अलीगढ़ २०२००१

शब्द यात्राएँ

मंत्रिन् से मेंडरिन (Mandarin) तक

डॉ. पूर्ण सिंह डबास

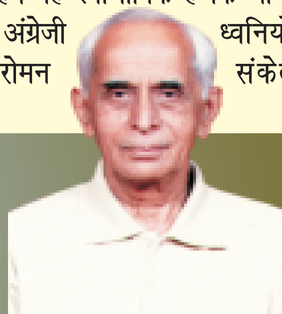

चीन की प्रमुख एवं राजकीय भाषा के रूप में-'मंदरिन्, मंदारिन या मेंडरिन' आदि नामों से तो अनेक लोग परिचित हैं लेकिन इनका विकास संस्कृत मंत्रिन् से हुआ है इसे बहुत कम लोग जानते हैं,यहाँ तक कि वे चीनी भी, जिनकी यह राजभाषा है। आइए मंदरिन के विकास पर विचार करते हैं।

संस्कृत की मन् धातु 'मनन करने, सोचने-विचारने, कल्पना करने, स्मरण करने, मानने या विश्वास करने तथा ध्यान करने' आदि अनेक अर्थों की बोधक है। संस्कृत में प्रयुक्त-'मत, मति, मनस् (मन), मनन, मनीषा, मनु, मनुष्य, मन्तव्य तथा मन्यु' आदि शब्द भी इसी धातु से निर्मित हैं। वस्तुतः यह व्यापक प्रसार-क्षेत्र की धातु है। अवेस्ता मन् (man), यूनानी मीनो (méno), मीमोन(mémona);लैटिन मेन्नॅस् (mens) मेमिनिस्स (meminisse)मोनेरे(monere); स्लाव और लिथुआनियन मिनॅति(minéti); गौथिक ग-मुनन् (ga-munan); जर्मन मेइनॅन (meinen); अंग्रेजी माइंड (mind) तथा मीन (mean) आदि भी इसी मन् धातु के रूपान्तरण हैं।

इतना ही नहीं संस्कृत के मंत्र ('विचार का उपकरण, पवित्र वाणी या पाठ, प्रार्थना, स्तुतिगान तथा वैदिक ऋचा आदि); मंत्रण/मंत्रणा (परामर्श, मशविरा, विचार-विमर्श); मंतृ (विचारक, परामर्शदाता) तथा मंत्रि या मंत्रिन् (बुद्धिमान, वाक्पटु; मंत्रों या ऋचाओं का ज्ञाता; मंत्रोच्चारक; राजा को परामर्श या मंत्रणा देने वाला; मंत्री) आदि शब्दों का मूल भी मन् धातु है। विभिन्न विभागों या विषयों के आधार पर राजा के अनेक मंत्री होते थे और उनमें जो मुख्य या प्रधान होता है वह महामंत्रिन्/महामंत्री कहलाता था।

बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार के साथ जो हजारों शब्द या अभिव्यक्तियाँ चीन में पहुँचीं उनमें से संस्कृत का मंत्रि या मंत्रिन् भी एक है जिसका प्रयोग छिङ् राजवंश(सन् १६४४ से १९११) के आरम्भ से मिलता है। यह ध्यान देने की बात है कि संस्कृत तथा हिन्दी आदि की तरह चीनी भाषा की ध्वनियों में क-ग, च-ज, ट-ड, त-द तथा प-ब जैसा अघोष-घोष भेद नहीं है। यदि किसी चीनी भाषी के सामने हिन्दी के 'कान-गान', 'चाल-जाल', 'तान-दान' या 'पूरा-बूरा' जैसे शब्द युग्मों का उच्चारण किया जाए तो वह 'कान' और 'गान' में तथा 'चाल' और 'जाल' आदि में अंतर नहीं कर पाएगा। इस स्थिति के परिणाम स्वरूप चीनी-भाषा भाषियों द्वारा संस्कृत 'मंत्रिन्' को अपनी भाषा में प्रयुक्त तान (tone) के आधार पर मंतॅरिन/मंतॅरॅन या मंदरिन/मंदॅरॅन जैसा उच्चारित किया गया । क्योंकि चीनी भाषा की लिपि चित्रात्मक है इसलिए उसमें किसी पूरे शब्द के लिए तो संकेत है लेकिन हिन्दी-अंग्रेजी आदि की तरह,अलग-अलग ध्वनियों के लिए (क, ख, ग या a, b, c जैसे) संकेत नहीं हैं। इस समस्या के समाधान के लिए उन्होंने रोमन लिपि को अपनी भाषा की ध्वन्यात्मक लिपि के रूप में स्वीकार कर रखा है। यह स्वाभाविक है कि चीनी ध्वनियों का उच्चारण अंग्रेजी ध्वनियों के समरूप न होने से ये रोमन संकेत चीनी ध्वनियों का मोटे तौर पर प्रतिनिधित्व करते हैं। क्योंकि चीनी त के लिए रोमन का d संकेत स्वीकृत है इसलिए ऊपर उल्लिखित चीनी मंतॅरिन या मंतॅरॅन आदि को रोमन संकेतों में Mandarin (Mande-rin/ren) रूप में लिखा गया। अंग्रेजी के d का उच्चारण लगभग ड जैसा होता है इसलिए चीनी मंतॅरिन को अंग्रेजी में मेंडरिन बोला गया तथा अंग्रेजी के प्रभाव स्वरूप हिन्दी आदि भाषाओं में थोड़े ध्वनि-परिवर्तन के साथ इसके मंदरिन या मंदारिन रूप प्रचलित हो गए।

चीनी भाषा तक पहुँचते-पहुँचते संस्कृत मंत्रिन् में जहाँ ध्वनि का परिवर्तन हुआ वहाँ इसमें अर्थगत परिवर्तन भी आया और इसका प्रयोग-'चीनी साम्राज्य के नौ उच्च पदों में से किसी भी पद पर आसीन अधिकारी; प्रान्त का प्रशासक; उच्च पदस्थ व्यक्ति; साहित्य-जगत् की महान् विभूति; आदि के अर्थों में होने लगा। ये उच्च पदस्थ या राजतंत्र से जुड़े व्यक्ति तथा प्रतिष्ठित साहित्यकार जिस (शिष्ट) भाषा का प्रयोग करते थे, मंत्रियों या मंतॅरिन/मंदॅरिन की भाषा होने

के कारण, वह भी मंतॅरिन या मंदॅरिन कहलाई। स्वाभाविक है यह राजधानी पेइचिङ (पीकिंग या बीजिंग) के आसपास की बोली थी अतः मंदॅरॅन/मंदॅरिन शब्द 'पीकिंग की बोली' तथा प्रकारान्तर से चीन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाषा के लिए प्रयुक्त होने लगा जो कि कालान्तर में विकसित होकर चीन की प्रमुख भाषा और साथ ही राजभाषा ('क्वान् हुआ') के रूप में प्रतिष्ठित हुई।

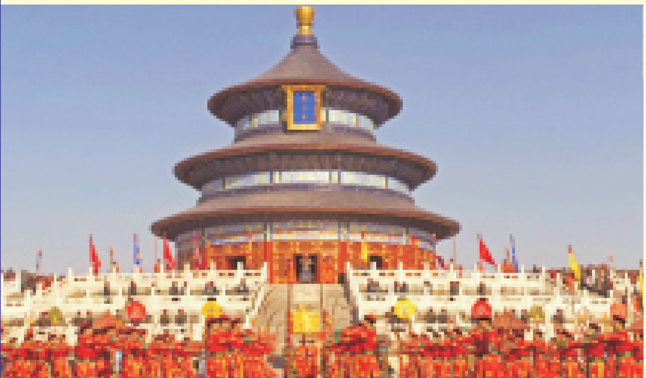

संस्कृत मूल का यह मंतॅरिन, मंदॅरिन या मंदॅरॅन शब्द चीनी से पुर्तगाली में पहुँचा जहाँ इसका रूप मंदरिम हो गया। पुर्तगाली से इसे अंग्रेजी में ग्रहण किया जहाँ यह मेंडरिन बन गया।[2] अंग्रेजी का यही मेंडॅरिन थोड़े परिवर्तन के साथ हिन्दी आदि आधुनिक भारतीय भाषाओं में मंदरिन या मंदारिन रूप में प्रयक्त होता है। भाषा के संदर्भ में मंदरिन या मंदारिन के स्थान पर आजकल 'चीनी' शब्द का प्रचलन अधिक होने लगा है और मंदारिन का प्रयोग बहुत ही कम रह गया है। चीनी के साथ-साथ संस्कृत मंत्रि/मंत्रिन् मलय भाषा में भी पहुँचा। वहाँ इसका रूप मेंतेरि (menteri) है जो राज-मंत्री या मिनिस्टर, किसी सरकारी विभाग का अध्यक्ष तथा वरिष्ठ कूटनीतिक प्रतिनिधि का बोधक है।

१. जिस प्रकार चीनी भाषियों ने अपनी त ध्वनि के लिए रोमन प्रतिरूप d स्वीकार कर रखा है उसी प्रकार अपनी च, थ, प एवं फ ध्वनियों के लिए क्रमशः j, t, b तथा च संकेत सुनिश्चित कर रखे हैं। इसी आधार पर जब चीनी लोग अपनी राजधानी का नाम रोमन संकेतों में BEIJING लिखते हैं तो इसका चीनी उच्चारण बीजिंग न होकर पेइ-चिङ होता है जिसका मूलार्थ- (पेइ-उत्तर, चिङ-राजधानी) 'उत्तरी राजधानी' जो कि गर्मी के मौसम में चीनी सम्राटों की राजधानी होती थी इसके विपरीत नान् चिड़. (नान्-दक्षिण) नगर सर्दियों की राजधानी होता था।

२. अंग्रेजी में इसका प्रयोग मंत्रणा देने वाले या 'परामर्शदाता' के अर्थ में भी होता है।

एम-९३ साकेत, नई दिल्ली ११००१७
मोबाइल ०९८१८२११७७१

भारत के प्राचीन वैज्ञानिक चिकित्सकः आचार्य सुश्रुत

डॉ.भवानी लाल भारतीय

आयुर्वेद के विषय में एक प्रवाद यह प्रचलित है कि इसमें शल्य क्रिया के लिए कोई स्थान नहीं है। जब मध्यकाल में जर्राही का प्रचलन हुआ तो यह क्रिया अत्यन्त कष्टप्रद तथा अवैज्ञानिक थी। सच्चाई इससे भिन्न है। आयुर्वेद में शल्य क्रिया का पूर्ण विवेचन मिलता है। आचार्य सुश्रुत इस विद्या के आचार्य थे। सामान्यतया शल्य का प्रयोग काँटे के लिए होता है जो शरीर में प्रविष्ट होने पर अत्यन्त कष्टदायक हो जाता है। ऐसे शल्य के निवारण को ही शल्य क्रिया नाम दिया गया जो आज की सर्जरी का वाचक है। आचार्य सुश्रुत प्रसिद्ध वैदिक ऋषि विश्वामित्र के वंशज थे। आचार्य सुश्रुत का शल्यक्रिया विषयक ग्रन्थ 'सुश्रुत संहिता' कहा जाता है। यह प्रसिद्ध है कि देव वैद्य धन्वन्तरि ने जो एतद्विषयक उपदेश दिए उन्हें सुश्रुत संहिता में एकत्र किया गया है। आज जिसे

प्लास्टिक सर्जरी कहा जाता है वह मूलतः भारत में प्रचलित रही है। इसमें अंग प्रत्यारोपण आदि का विधान मिलता है।

सुश्रुत का समय ईसा पूर्व छः सौ वर्ष माना जाता है। सुश्रुत संहिता को ईसा की प्रथम शताब्दी में आचार्य नागार्जुन ने पुनः सम्पादित कर अभिनव रूप दिया। शल्यक्रिया में प्रयुक्त यंत्रों तथा अन्य सामग्रियों का विस्तृत उल्लेख इस ग्रन्थ में पाया जाता है। शल्यक्रिया का प्रारम्भिक अभ्यास फलों तथा वनस्पतियों पर किया जाता था। आज की भाँति मृतक शरीर पर भी प्रयोग व अभ्यास किया जाता था। सुश्रुत का कहना था कि एक योग्य चिकित्सक को आयुर्वेद के सैद्धान्तिक ज्ञान के साथ साथ प्रयोगात्मक क्रियात्मक ज्ञान अवश्य होना चाहिए।

३/५-शंकर कॉलोनी, श्रीगंगानगर

दृष्टिकोण

बन रहे हैं मानसिक रोगी

इन्टरनेट एडिक्शन

दुनिया भर में जो शोध हो रहे हैं, उससे साफ है कि अब इंटरनेट महज डिलिवरी सिस्टम नहीं रहा, जैसाकि पहले कहा गया था। इसने एक नया मानसिक वातावरण तैयार किया है। एक डिजिटल वातावरण, जिसकी धुरी मानव मस्तिष्क है। इसकी जकड़ से बहुत कम ही लोग बच पायेंगे।

ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय की फॉर्माकोलोजी की प्रोफेसर सुसान ग्रीनफील्ड कहती हैं, यह एक महत्वपूर्ण मुद्दा है। सच पूछिए, तो यह वैसे ही अनपेक्षित है, जैसे जलवायु परिवर्तन का मुद्दा। सुसान एक पुस्तक पर काम कर रही हैं, जिसका विषय यह है कि कैसे एक डिजिटल संस्कृति विकसित हो रही है। एक ऐसी संस्कृति जो हमारे भले के लिए नहीं है। हम अपने बच्चों के लिए एक बेहतर दुनिया देने के बजाय एक ऐसी दुनिया दे रहे हैं, जिस पर तकनीक हावी हो गयी है। १६ साल पहले एम. आइ. टी. (मैसाचुसेट्स इंस्टीटयूट ऑफ टेक्नोलॉजी) के सात युवा शोधकर्ताओं ने एक ऐसा प्रयोग किया, जिसमें मानव व मशीन के बीच फर्क कम से कम किया जा सके। भौतिक और काल्पनिक जगत् का साथ। मानव व कंप्यूटर का साथ। उन्होंने अपने पॉकेट में की-बोर्ड और रेडियो ट्रांसमीटर रखे और आँखों के सामने कम्प्यूटर स्क्रीन। वे अपने को 'साइबोर्ग्स' कहते थे। हमारी-आपकी नजर में उन्हें सनकी ठहराया जा सकता है, पर क्या आज हम सभी साइबोर्ग नहीं हैं? एम.आइ. टी. की मनोवैज्ञानिक शेरी टर्कल कहती हैं कि जीवन में हर समय जुड़ाव रखना ऊपरी तौर पर सामान्य दिख सकता है, पर ऐसा है नहीं। अमेरिका में स्थिति किस तरह बिगड़ गयी है, इसका आकलन आप इस बात से कर सकते हैं कि अमेरिकियों ने खुद को मशीन में खपा लिया है। वे प्रतिदिन आठ घण्टे स्क्रीन पर बिताते हैं। यह उस समय से ज्यादा है, जो हम सोने के साथ-साथ दूसरी गतिविधियों में बिताते हैं। किशोरों (टीनेजर्स) की बात करें, तो वे प्रतिदिन स्कूलों में सात घण्टे कंप्यूटर पर बिताते हैं। अगर इसमें दूसरी तकनीक को भी जोड़ लें, तो यह ११ घण्टे से भी अधिक समय हो जायेगा।

राष्ट्रपति बराक ओबामा पहले कार्यकाल के लिए प्रचार कर रहे थे, तब आइफोन लांच हो रहा था। अब अमेरिका में स्मार्टफोन के पुराने मॉडल्स आउटडेटेड हो चुके हैं। लोग इण्टरनेट के इतने क्रेजी हो गये हैं कि एक तिहाई यूजर्स बिस्तर से उठने के बाद ही ऑनलाइन हो जाते हैं। पलक झपकते ही टेक्स्ट मैसेज पहुँचने का असर यह है कि औसतन हर व्यक्ति (किसी भी उम्र का) एक महीने में ४०० टेक्स्ट भेजने या ग्रहण करने लगा है। यह वर्ष २००७ के मुकाबले चार गुना अधिक है। २००७ के आंकड़ों की तुलना करें, तो किशोर औसतन प्रतिमाह ३,७०० टेक्स्ट भेजते या ग्रहण करते हैं।

पाँच सालों में इन आंकड़ों में जो परिवर्तन हुए हैं, उससे लगता है कि हमारे हाथों से लगाम छूट चुकी है। अब कुछ भी हमारे नियंत्रण में नहीं रहा।

सनकी बना रहा इण्टरनेट ?

प्रश्न है कि क्या इण्टरनेट हमें क्रेजी (सरल भाषा में कहें तो सनकी) बना रहा है? इसके लिए आप न तो तकनीक या न ही इसके कन्टेंट को दोष दे सकते हैं। दुनिया की मशहूर पत्रिका न्यूजवीक रिव्यू ने कई देशों से एकत्र अपनी रिपोर्ट के आधार पर कहा है कि इण्टरनेट हमें एक तरह के सनक की ओर धकेल रहा है। यूसीएलए स्थित सेमेल इंस्टीट्यूट ऑफ न्यूरोसाइन्स एंड ह्यूमन बिहेवियर के निदेशक पीटर व्हाइब्रो कहते हैं, कम्प्यूटर इलेक्ट्रॉनिक कोकीन की तरह है। यह कोकीन अवसाद के चक्र को ईंधन देता है।

हमारे मन-मस्तिष्क पर इण्टरनेट का क्या असर पड़ा है, इस विषय पर निकोलस कार की चर्चित पुस्तक है 'द शैलोज'। इसे पुलित्जर पुरस्कार के लिए नामित भी किया गया था। कैलिफोर्निया की मनोवैज्ञानिक लैरी रोसन ने नेट के इस्तेमाल पर दशकों शोध किया है। उनका मानना है कि इण्टरनेट हमें सनकी बनाता है, हमें तनावग्रस्त करता है, हमें इस ओर ले जाता है कि हम इस पर ही निर्भर हो जायें। यहाँ तक कि यह हमें पागल भी बना सकता है।

चीन कर रहा सुरक्षित इस्तेमाल के उपाय

इण्टरनेट और मोबाइल व्यसन की चीजें हैं यह बहुत पहले ही स्थापित हो चुका है पर इसका विरोध करने वाले भी बहुत पहले से ही रहे हैं। चीन, ताईवान और कोरिया में इण्टरनेट व्यसन को राष्ट्रीय स्वास्थ्य संकट के रूप में लिया है। इन देशों ने इससे

निबटने की तैयारी भी शुरू कर दी है । इन देशों में लाखों-करोड़ों लोग (३० प्रतिशत किशोर भी) इण्टरनेट एडिक्ट हैं, जो गेम्स, सोशल मीडिया या दूसरे एप्लीकेशन्स का इस्तेमाल करते हैं। कई उदाहरण हैं। एक दम्पती ऑनलाइन बच्चे के पोषण के चक्कर में अपने नवजात बच्चे को लेकर इतने लापरवाह हुए कि उसकी मौत हो गयी। एक युवा ने अपनी माँ को बस इसलिए पीटा कि उसने उसे लॉग ऑफ करने के लिए कहा था। यह भी उदाहरण सामने है कि १० लोगों की मौत खून का थक्का जमने से हुई, क्योंकि वे लम्बे समय से कम्प्यूटर पर बैठे थे। अब कोरिया की सरकार ऐसे एडिक्ट लोगों के इलाज के लिए फण्ड देने की व्यवस्था कर रही है। यह भी कि युवा लोगों के लिए रात्रि में वेब बंद किये जायें। जबकि चीन नेट के सुरक्षित इस्तेमाल के उपाय कर रहा है।

> यह ठीक है कि इन्टरनेट आज जानकारी में वृद्धि का और अन्य अनेकानेक सुविधाओं का स्रोत बन गया है। परन्तु जिस प्रकार आज की पीढ़ी इस विधा के प्रति आसक्त तथा पूर्णतः निर्भर होती जा रही है, विशेषज्ञ विशेषतः मनोवैज्ञानिक इससे चिन्तित हैं। इन तरंगों से होने वाले शारीरिक नुकसान की भी चर्चा है ही। प्रस्तुत आलेख में अनेक शोधों के आधार पर इन्टरनेट के हानि-पक्ष पर चर्चा की गयी है। **- संपादक**

ड्रग की तरह है मीडिया

वर्ष २०१० में मेरीलैंड विश्वविद्यालय ने एक प्रयोग किया। इस प्रयोग में २०० छात्रों को शामिल किया गया। ये सभी अंडरग्रेजुएट्स थे। उनसे कहा गया कि वे सभी एक दिन के लिए वेब और मोबाइल तकनीक का इस्तेमाल पूरी तरह से बन्द करें और जो अनुभव वे प्राप्त करें, उसे डायरी में नोट करें। अध्ययन में शामिल एक छात्र ने बताया कि वह इण्टरनेट एडिक्ट है और इस पर उसकी निर्भरता खतरनाक स्तर तक पहुँच गयी है। दूसरे छात्र ने बताया कि मीडिया उसके लिए ड्रग की तरह है। विश्वविद्यालय के एक छात्र ने कहा, अधिकांश कॉलेज छात्र नहीं चाहते कि वे तकनीक से जुड़ें, लेकिन दुनिया से जुड़े रहने के लिए वह मीडिया से अपना लिंक नहीं तोड़ सकते।

ड्रग से भी खतरनाक है इण्टरनेट

दो सालों में वेब एडिक्शन पर दुनिया भर में चर्चा की जा रही है। अमेरिका में वेब एडिक्शन पर लॉरी रोसन की नयी पुस्तक आइ डिस्ऑर्डर आयी है। उनकी टीम ने ७५० लोगों पर सर्वे किया। इसमें किशोरों और वयस्कों के इण्टरनेट इस्तेमाल, उनके अनुभवों और मानसिक विकारों पर व्यापक अध्ययन किया गया। यह पाया गया कि ५० से ऊपर के उम्र के लोगों को छोड़ कर सभी ने टेक्स्ट मैसेज, ई-मेल या सोशल नेटवर्क पर प्रायः हमेशा समय बिताया। या यूँ कहें कि हर १५ मिनट पर इन्होंने अपडेट किया। इसमें आश्चर्य वाली बात नहीं है। जो यह चाहते हैं कि वे हमेशा ऑनलाइन रहें, वे दरअसल इस बात के लिए बाध्य हुए कि वे कनेक्टेड रहें. इसे फ्री च्वाइस कहा जाता है।

मस्तिष्क होता है प्रभावित

२००८ में मेमोरी एण्ड एजिंग रिसर्च सेंटर के हेड गैरी स्मॉल ने इण्टरनेट इस्तेमाल से मस्तिष्क पर पड़ने वाले असर का अध्ययन किया। ऐसा करने वाले वह पहले व्यक्ति थे। शोध में शामिल सभी लोगों को उन्होंने ब्रेन स्कैनर से गुजारा। उन्होंने पाया कि जो वेब यूजर्स थे उनके प्रीफ्रंटल कॉर्टेक्स (मस्तिष्क का आवरण) में गड़बड़ी थी। चीन में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार, इंटरनेट एडिक्ट्स के मस्तिष्क में एक सफेद चीज देखी गयी, जिसे अतिरिक्त नर्व सेल कहा गया। मस्तिष्क के उन हिस्सों में जहाँ ध्यान, नियंत्रण और मुख्य गतिविधियाँ होती हैं, वहाँ ही ये कोशिकाएँ विकसित होती हैं।

नींद उड़ जाती है..

इण्टरनेट एडिक्ट की नींद उड़ जाती है। वे व्यायाम नहीं कर पाते। उनकी आमने-सामने बात करने की क्षमता प्रभावित होती है। और यह डिजिटल प्रभाव कुछ दिनों के लिए नहीं होता। इसका असर कई सालों तक रहता है। और लगातार बढ़ता जाता है।

फैंटम वाइब्रेशन सिंड्रोम

आज दो तिहाई साइबोर्ग्स फैंटम वाइब्रेशन सिंड्रोम के शिकार हैं। दरअसल, इन्हें आभास होता है कि उनका फोन वाइब्रेट कर रहा है। असल में ऐसा कुछ नहीं होता। इसे ही फैंटम वाइब्रेशन सिंड्रोम कहते हैं।

इन्सान उपकरण बन कर रह जायेगा

तकनीक ने एक नये वातावरण का निर्माण किया है, जिसकी वजह से भविष्य में इंसान कुछ सोचने या समझने की स्थिति में नहीं रहेगा। वह महज एक उपकरण बनकर रह जायेगा। हम अपने बच्चों को एक अद्भुत दुनिया देना चाहते हैं। हम उनके लिए यह कर सकते हैं। लेकिन इस बात से इनकार भी नहीं कर सकते कि यदि सोते-जागते, चलते-फिरते हम तकनीक के साथ जुड़े रहेंगे, तो यह संभव नहीं होगा। यह महज कपोल कल्पना ही साबित होगी।

स्वास्थ्य

एक सम्पूर्ण उपचार पद्धति है निश्चयात्मक स्वीकारोक्ति

सीताराम गुप्ता

उपचार की प्रक्रिया में 'निश्चयात्मक स्वीकारोक्ति' अथवा 'रचनात्मक आत्म संसूचन' (कंस्ट्रक्टिव ऑटो सजेशन) का महत्वपूर्ण स्थान है। उपचार में यह एक महत्वपूर्ण तत्त्व अथवा घटक ही नहीं है अपितु अपने आप में एक सम्पूर्ण उपचार पद्धति है। इसे 'रीकंडीशनिंग थिरेपी' भी कहते हैं क्योंकि इस विधि द्वारा मन में जिन अवांछित घातक अथवा नकारात्मक विचारों की कंडीशनिंग हो चुकी है उनको मन से निकाल कर अपेक्षित नए उपयोगी अथवा सकारात्मक विचारों की पुनः कंडीशनिंग की जाती है। मन की धुलाई की जाती है जिससे पुराने विचारों के प्रभाव अथवा संस्कार क्षीण होकर समाप्त हो जाते हैं तथा नये संस्कार निर्मित हो जाते हैं।

हमारा वर्तमान स्वास्थ्य, वर्तमान व्याधि अथवा पीड़ा, वर्तमान जीवन प्रवाह तथा समग्र वर्तमान सामाजिक व आर्थिक स्थिति हमारी पिछली सोच, हमारे पिछले चिंतन का परिणाम है। जो हमने पीछे सोचा उसी की मन में फीडिंग का, उसी कंडीशनिंग का परिणाम हमारा वर्तमान है तो वर्तमान की सोच, वर्तमान के चिंतन तथा कंडीशनिंग का कल पर अथवा आने वाले हर क्षण पर अवश्य प्रभाव पड़ेगा। इसके लिए आवश्यक है कि मन की पिछली ग़लत कंडीशनिंग को प्रभावहीन किया जाए तथा पुनः सही कंडीशनिंग की जाए। इस सारी प्रक्रिया में दो बातें प्रमुख हैं। एक है डीकंडीशनिंग तथा दूसरी रीकंडीशनिंग।

१. डीकंडीशनिंग: इस अवस्था में सबसे पहले हम अपने अवचेतन मन की ग़लत धारणाओं की पहचान कर उनसे छुटकारा पाते हैं। इसके लिए सबसे पहले हम किसी भी ध्यान पद्धति अथवा मेडिटेशन के द्वारा शरीर तथा मन को शांत कर लेते हैं। शरीर तथा मन की शांत, निश्चल तथा तनावमुक्त अवस्था में मन में दबे विकार या अनुपयोगी गलत धरणाएँ निकल कर बाहर हो जाती हैं। मन नए बीज बोने के लिए तैयार भूमि की तरह हो जाता है। यही मन की डीकंडीशनिंग है।

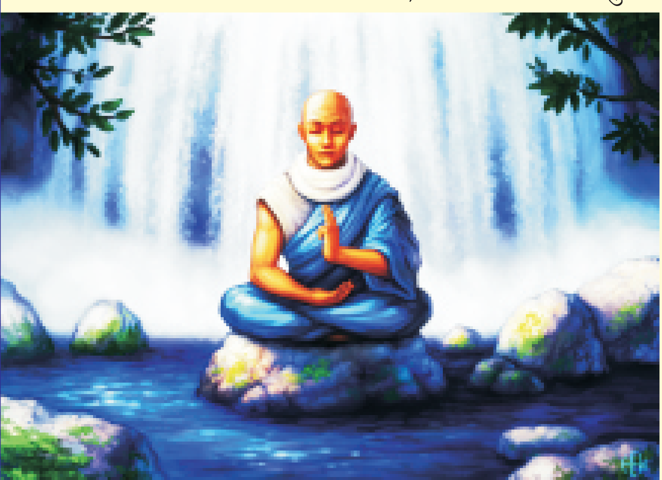

२.रीकंडीशनिंग: एक बार पात्र के रिक्त तथा निर्मल होने की देर है उसके बाद उसमें अपेक्षित उपयोगी पदार्थ डालना अत्यंत सरल है। मन रूपी पात्र के स्वच्छ तथा निर्मल होने पर उसमें उपयोगी विचाररूपी पदार्थ सावधानीपूर्वक डालें ताकि अपेक्षित बाह्य स्थिति यथा अच्छा स्वास्थ्य, रोग मुक्ति, उत्साह, प्रभावशाली व्यक्तित्व तथा समृद्धि की प्राप्ति संभव हो सके। और इसके लिए अपेक्षित सकारात्मक तथा आशावादी विचारों द्वारा मन को पुनः आप्लावित करना ही मन की रीकंडीशनिंग है। रचनात्मक आत्म संसूचन (कंस्ट्रक्टिव ऑटो सजेशन) भी यही है क्योंकि इसमें भी स्वयं को अच्छे सुझाव दिये जाते हैं जिससे बुरे विचार बदल जाएँ। लेकिन इसकी भी वही प्रक्रिया है अर्थात् पहले पुराने विचारों से मुक्ति तथा उसके बाद नये सुझाव। ये सुझाव कुछ सकारात्मक वाक्यों के रूप में ही होते हैं और यही वाक्य निश्चयात्मक स्वीकारोक्तियाँ हैं।

गौतम बुद्ध के अनुसार चार आर्य सत्य हैं :

१. दुख है २. दुख का कारण है ३.दुख का निदान है
४. वह मार्ग भी है जिससे दुख का निदान संभव है।

गौतम बुद्ध के मतानुसार अष्टांगिक मार्ग ही वह मध्यम मार्ग है जिससे दुखों का निदान होता है। इस अष्टांगिक मार्ग में से एक अंग है सम्मा वायामो अर्थात् सम्यक् व्यायाम। व्यायाम का अर्थ शारीरिक व्यायाम नहीं अपितु मन का व्यायाम है। मन की साधना है। इसमें चार बातें हैं। पहली बात तो ये कि हमारे अंदर जो दुर्गुण हैं वो दूर हो जाएँ। दूसरी बात ये कि नये दुर्गुण पैदा न हों। तीसरी ये कि सद्गुण बने रहें तथा चौथी ये कि नये गुण भी विकसित होते रहें। डीकंडीशनिंग द्वारा हम दुर्गुणों से मुक्ति पा सकते हैं तथा रीकंडीशनिंग द्वारा हम सद्गुणों का विकास कर सकते हैं। यदि हम कहें कि सद्गुणों अथवा उपयोगी भावों का विकास हो रहा है तो स्वतः दुर्गुणों अथवा अनुपयोगी भावों का ह्रास भी हो रहा है। अतः निरंतर डीकंडीशनिंग तथा रीकंडीशनिंग द्वारा हम 'सम्यक् व्यायाम' की स्थिति को प्राप्त कर सकते हैं। यही व्यक्तित्व का पुनर्निमाण है तथा व्यक्ति का रूपान्तरण है।

ए.डी.-१०६-सी, पीतमपुरा,
दिल्ली-११००३४

आत्म निवेदन

सन्त कौन? अतिथि कौन?

इं. रामेश्वर दयालु गुप्त

ऋषिवर देव दयानन्द महाराज ने अपनी प्रबल योग साधना से परम पिता परमात्मा का साक्षात् कर आप्तता को प्राप्त किया और उन्होंने संसार को अज्ञान, तमस् से आच्छादित, कुरीतियों के गहरे कूप से निकाल कर वेद सूर्य के प्रचण्ड प्रकाश से मानव का आत्मिक, मानसिक एवं शारीरिक दीप्तता से हृदय वैदिक वैचारिक स्फुटन के लिए 'आर्य समाज' की स्थापना की। महर्षि के दृढ़ वैराग्य, अखण्ड ब्रह्मचर्य, तपस्वी दिनचर्या एवं वेद की साहसी वैचारिक ज्ञान गंगा में अनेकों समकालीन राजे-महाराजे जो चारित्रिक अवगुणों और 'अन्ध विश्वास' की कालिख से पूर्ण कलुषित हो गए थे, निर्मल हो ऋषि के सम्मुख पदावनत हो गए और भविष्य के लिए सत्प्रेरित भी। ऋषि जी ने इसी वैचारिक क्रान्ति के स्थायित्व के लिए वैदिक संस्कृति की आदि परम्परा गुरुकुल-शिक्षा प्रणाली के लिए भी 'ऋषि वचनों' में निर्देशित किया। अन्धविश्वास, पाखण्ड और मानव-मानव की आपस की फूट के घटाटोप को देखकर उन्होंने कहा था यद्यपि यह रोग बहुत बढ़ गया है परन्तु ऐसा नहीं है जिसकी चिकित्सा संभव न हो। इस रोग की चिकित्सा के लिए मेरे जैसे हजारों व्यक्तियों की आवश्यकता है।

ऋषि की इस वेदना को आत्मसात् कर हजारों त्यागी-तपस्वी उनके द्वारा सुझाए गए मार्ग पर जान की बाजी लगाकर इस पवित्र समर में कूद पड़े। ऋषि के मन्तव्यों और सिद्धान्तों को कार्यरूप देने के लिए श्रद्धेय अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी ने अपने को समर्पित किया। उन्होंने गुरुकुल और कन्या गुरुकुल खोलकर वैदिक संस्कृति की वैचारिक क्रान्ति का अभ्युदय किया। वेद और आर्ष साहित्य 'पठन-पाठन' से चारों आश्रमों, ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यासाश्रम को वैदिक संरचना पुनः यथावत् प्राप्त हुई। जहाँ पहले तीन आश्रम वैदिक ज्ञान से परिपूर्ण हुए, वहीं पाखण्ड से विभूषित जगत् में 'संन्यास' को वैदिक परिभाषा प्राप्त हुई और उनके सिद्धान्त-

नार मुई घर सम्पति नासी। मूड़ मुड़ाये बने संन्यासी।।
मूंड मुड़ाये तीन गुण सिर की मिट जा खाज।
खाने को भोजन मिले लोग कहें महाराज।।

को तिलांजलि मिली तथा पुनः वैदिक संन्यास का मार्ग प्रशस्त हुआ जो पूर्ण वैराग्य का विषय है। संन्यासी पक्षपात छोड़के विरक्त होकर सब पृथिवी आदि में परोपकारार्थ विचरे।'
साथ में कठ वल्ली २ मं. २४ को उद्धरित करते हैं-

नाविरतो दुश्चरितान्नाशान्तो नासमाहितः।
नाशान्तमानसो वापि प्रज्ञानेनैनमाप्नुयात्॥

जो दुराचार से पृथक् नहीं, जिसको शान्ति नहीं, जिसका आत्मा योगी नहीं, जिसका मन शान्त नहीं है, वह संन्यास लेकर भी प्रज्ञान से परमात्मा को प्राप्त नहीं होता।

अब प्रश्न उठता है कि दुराचार व भ्रष्टाचार क्या है? भ्रष्टाचार शब्द का तो आजकल लोगों ने केवल एक ही अर्थ किया हुआ है कि जो केवल चोरी, झूठ, रिश्वतखोरी से धन संग्रह करें। परन्तु भ्रष्टाचार का स्पष्ट अर्थ है 'भ्रष्ट-आचार'। जो वेद विहित कर्म हैं वे ही सदाचार अर्थात् धर्म और जो निषिद्ध कर्म हैं वे भ्रष्टाचार, दुराचार एवं अधर्म हैं। ऋषि लिखते हैं-

वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः संन्यासयोगाद्यतयः शुद्धसत्त्वाः।
ते ब्रह्मलोकेषु परान्तकाले परामृताः परिमुच्यन्ति सर्वे॥
मुण्डको मुण्ड ३ खं. २१ मं. ६

जो वेदोक्त अर्थात् परमेश्वर प्रतिपादक वेद मंत्रों के अर्थ ज्ञान और आचार में अच्छे प्रकार निश्चित संन्यास योग से शुद्धान्तःकरण संन्यासी होते हैं वे परमेश्वर में मुक्ति सुख को प्राप्त हो भोग के पश्चात् जब मुक्ति में सुख की अवधि पूरी हो जाती है तब वहाँ से छूटकर संसार में आते हैं। मुक्ति के बिना दुःख का नाश नहीं होता।

न वै सशरीरस्य सतः प्रियाप्रिययोरपहतिरस्त्यशरीरं
वा वसन्तं त प्रियाप्रिये स्पृशतः॥ छान्दो प्रपा ८। खं.१२। प्रवाक१

जो देहधारी है वह सुख-दुःख की प्राप्ति से पृथक् कभी नहीं

संन्यासी संसार में सर्वोच्च है। सम्राट की तो केवल अपने राज्य में पूजा होती है परन्तु परिव्राट् की सारे संसार में। ऐसा क्यों? क्योंकि संन्यासी समस्त एषणाओं, राग-द्वेष से मुक्त है। उसके हृदय में केवल और केवल लोक कल्याण की भावना है। वह किसी परिवार, समाज का नहीं; मानवता का प्रतिनिधित्व करता है। मानवता का संवर्धन ही उसका कार्य है। वह विरक्त है। इन्द्रियजन्य सुख वह त्याग चुका है। संसार के भोग-ऐश्वर्य उसे लेशमात्र भी आकर्षित नहीं करते। ऐसा व्यक्ति जब निष्पक्ष और निर्भीक हो तो अपना व संसार का कल्याण ही करता है। दुर्भाग्य से आज इस कसौटी पर खरा उतरने वाला सन्त अदृश्य है। आज सर्वत्र तथाकथित सन्त भोग-विलास में आपादमस्तक डूबे हैं- स्वार्थ-सिद्धि उनका ध्येय रह गया है। ऐसे में विद्वान् लेखक का यह लेख मननीय है जो सन्त के व्यक्तित्व को परिभाषित करता है।

– अशोक आर्य

हो सकता और जो शरीर रहित जीवात्मा मुक्ति में सर्वव्यापक परमेश्वर के साथ शुद्ध होकर रहता है उसको सांसारिक सुख-दुःख नहीं होता। इसलिए-

लोकैषणायाश्चत वित्तैषणायाश्च ।
पुत्रैषणायाश्चोथायाथ भैक्षाचर्य चरन्ति ॥

तु.शत.कां. १४ प्रपा ५। ब्राह्म. २। कं.१

लोक में प्रतिष्ठा का लाभ, धन से भोग व मान्य, पुत्रादि के मोह से अलग होके संन्यासी लोग भिक्षुक होकर रात दिन मोक्ष के साधनों में तत्पर रहते हैं।

अतः स्पष्ट है कि दृढ़ वैराग्य 'मोक्ष' का मार्ग है जिसमें 'ब्रह्म' बनके अर्थात् चारों वेदों को जान के संसारी व्यवहारों को छोड़के न्यास अर्थात् संन्यास करके जो सब मनुष्यों को सत्य धर्म और सत्य विद्या से लाभ पहुँचाना है यह भी विद्वान् मनुष्यों को धर्म का लक्षण जानके करना उचित है।' यदि यह कहा जाए कि संन्यास और मोक्ष एक ही हैं तो कोई शास्त्र व सिद्धान्तविरोध नहीं।

मोक्ष के चार साधन हैं।

१. विवेक २. वैराग्य ३. षटक् सम्पत्ति अर्थात् छह प्रकार के कर्म- शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा और समाधान। ४. मुमुक्षुत्व। इनका अनुष्ठान करे। संन्यासी को योग्य है कि अतिथि बन सत्योपदेश करते हुए विचरे।

अब विचार अतिथि पर करते हैं कि अतिथि कौन है ?

जो पूर्ण विद्वान्, परोपकारी, जितेन्द्रिय, धार्मिक, सत्यवादी, छलपकपट रहित, नित्य भ्रमण करने वाले मनुष्य होते हैं, उनको अतिथि कहते हैं। जिनके घर में गुणयुक्त विद्वान् व्रात्यो. उत्तम गुण विशिष्टि सेवा करने के योग्य अर्थात् जिनके आने जाने की कोई भी निश्चित तिथि नहीं है जो अकस्मात् आवें और जावें, जब ऐसा मनुष्य गृहस्थों के घर में प्राप्त हों।

तद्यस्यैवं विद्वान् व्रात्योतिथिर्गृहानागच्छेद्॥ १॥

महर्षि दयानन्द चतुर्थ समुल्लास में लिखते हैं-

'जब तक उत्तम अतिथि जगत् में नहीं होते तब तक उन्नति भी नहीं होती। उनके सब देशों में घूमने और सत्योपदेश करने से पाखण्ड की वृद्धि नहीं होती और सर्वत्र गृहस्थों को सहज से सत्य विज्ञान की प्राप्ति होती रहती है और मनुष्य मात्र में एक ही धर्म स्थिर रहता है। बिना अतिथियों के सन्देह निवृत्ति नहीं होती। सन्देह निवृत्ति के बिना दृढ़ निश्चय भी नहीं होता। निश्चय के बिना सुख कहाँ।

अतः सिद्ध है कि संन्यासी, देव एवं ऋषि ही अतिथि हैं चूँकि वह परिव्राजक है और सत्यविज्ञान के द्वारा सर्वत्र गृहस्थों में पाखण्ड का ह्रास करना ही उन्हें अभीष्ट है। संन्यासी स्वयं मोक्ष के द्वार पर आसीन होकर समस्त प्रजा को मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करता है।

इससे सुतरां स्पष्ट है कि जिसमें संन्यासी का एक गुण भी न हो फिर वह अतिथि कैसा? हाँ, पौराणिक जगत् के जैसी परिस्थितिजन्यता से दिखावा मात्र के लिए कपड़े रंग कर बाबा तो बन जाता है परन्तु संन्यासी नहीं। संन्यास तो दृढ़ वैराग्य का विषय है। ब्राह्मण ग्रन्थ का वाक्य है 'हरेव विरजेत तद हरेव प्रवजेद्वानाद्वा गृहाद्वा।' जिस दिन दृढ़ वैराग्य प्राप्त होवे उसी दिन चाहे वानप्रस्थ का समय पूरा न हुआ हो अथवा वानप्रस्थ आश्रम का अनुष्ठान न करे गृहाश्रम से ही संन्यास ग्रहण करें, संन्यास में दृढ़ वैराग्य और यथार्थ ज्ञान होना ही मुख्य कारण है।

ब्राह्मण ग्रन्थ में यह भी लिखा है कि 'ब्रह्मचर्यादेव प्रवजेत्'। यदि पूर्ण अखण्डित ब्रह्मचर्य, सच्चा वैराग्य और पूर्ण ज्ञान विज्ञान को प्राप्त होकर विषयासक्ति की इच्छा आत्मा से यथावत् उठ जाये, पक्षपात रहित होकर सबके उपकार करने की इच्छा होवे और जिसको दृढ़ निश्चय हो जावे कि मैं मरण पर्यन्त यथावत् संन्यास धर्म का निर्वाह कर सकूँगा तो वह न गृहाश्रम करें न वानप्रस्थ किन्तु ब्रह्मचर्य आश्रम को पूर्ण कर ही के संन्यास आश्रम को ग्रहण कर लें।'

प्रधान : आर्य समाज दयानन्द नगर, गाजियाबाद

उदयपुर जिला क्रिकेट संघ के उपाध्यक्ष पद पर चयनित होने पर "सत्यार्थ सौरभ" परिवार की ओर से हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ।

श्री विनोद राठौड़

निर्वाचन-

आर्य समाज, रामनगर, रुडकी-प्रधान श्री मदन पाल शर्मा, मंत्री श्री रामेश्वर प्रसाद सैनी कोषाध्यक्ष श्री जे.डी. त्यागी चुने गए। सभी को सत्यार्थ सौरभ परिवार की ओर से बधाई एवं शुभकामनाएँ।

आर्य समाज, विज्ञाननगर कोटा-प्रधान श्री जे.एस.दूबे, मंत्री श्री राकेश चड्ढ़ा, कोषाध्यक्ष श्री कौशल रस्तोगी। उपरोक्त पदाधिकारियों एवं सभी अन्य निर्वाचित सदस्यों को सत्यार्थ सौरभ परिवार की ओर से हार्दिक बधाई।

पत्रिका से सम्बन्धित किसी प्रकार की जानकारी/शिकायत के लिये निम्न चलभाष पर सम्पर्क करें।
09314535379

दूरभाष : ०२९४-२४१७६९४, चलभाष ०९३१४५३५३७९
कृपया न्यास की वेबसाईट : www.satyarthprakashnyas.org पर अवश्य देखें

प्रत्येक माह की 20 तारीख तक भी पत्रिका न मिलने पर कृपया इसी चलभाष पर सम्पर्क करें।

विजयादशमी पर विशेष

रामायण में विज्ञान

रामायणकालीन विज्ञान चर्मोत्कर्ष पर था। वैदिक संस्कृति ज्ञान-विज्ञान का स्रोत मानी जाती है। महर्षि वाल्मीकि रचित रामायण को पढ़ने से पता चलता है कि तत्कालीन समाज के लोग विज्ञान के आधुनिक आविष्कारों की भाँति अनेक प्रकार के आविष्कार कर चुके थे। रामायण के प्रारम्भ में महर्षि नारद कितने स्वाध्यायशील थे जो लिखा है उससे ज्ञात होता है कि लोगों को ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा दी जाती थी। यथा नारद ने कहा- मैं ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद चारों वेदों को जानता हूँ। इनके अतिरिक्त इतिहास पुराण (ब्राह्मण ग्रन्थ तथा कल्पादि) वेदों का वेद=व्याकरण तथा निरुक्त, पित्र्य=वायु-विज्ञान, राशि=गणित-विद्या, दैवं=प्रकृति-विज्ञान, निधि=भूगर्भ-विद्या, वाको-वाक्य=तर्कशास्त्र, एकायन=ब्रह्मविज्ञान, इन्द्रियविज्ञान, भक्तिशास्त्र, पंचभूत ज्ञान, धनुर्वेद, ज्योतिष्शास्त्र सर्पविज्ञान, देवजन विज्ञान=सर्पों को वश में करने वाली गन्धर्व विद्या को मैं जानता हूँ। इतना मैंने अध्ययन किया है। (छान्दो. ३०७-१-२) रामायणकाल में छोटे-छोटे हवाई जहाज अनेक व्यक्तियों के पास थे। नारद जी भी इधर उधर भ्रमण के लिए वायुयान का ही प्रयोग करते थे। प्रमाण के लिए वाल्मीकि रामायण का श्लोक देखिए-

यथावत् पूजितस्तेन देवर्षि नारदस्तथा।
आपृच्छ्यैवाभ्यनुज्ञात स जगाम विहाय सम्। (बालकाण्ड सर्ग२, श्लोक २)

देवर्षि नारद वाल्मीकि द्वारा विधिवत् सत्कृत होकर उनकी आज्ञा पा आकाश मार्ग से चले गए।

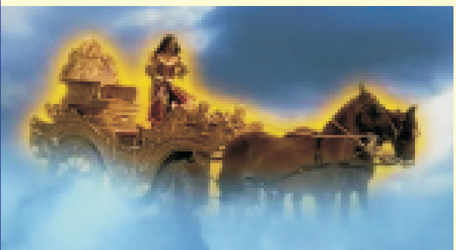

विशेष-रामायण में अन्यत्र भी आकाश मार्ग में गमन करने के उदाहरण हैं जो इस लेख में दिए जायेंगे।

रामायण में अयोध्या नगरी का जो वर्णन मिलता है उसके अनुसार यह नगरी ६० मील लम्बी और १५ मील चौड़ी थी उसमें बड़ी-बड़ी लम्बी चौड़ी सड़कें बनीं थीं। यह राजधानी एक विस्तृत राजपथ से सुशोभित थी। इस राजपथ से अनेकों सड़कें निकाली गईं थीं। सड़कों पर प्रतिदिन जल छिड़का जाता था। यह नगरी दुर्गम किलों और खाईयों से युक्त थी। यहाँ इस नगरी के 'अष्टचक्रा नवद्वारा पुर अयोध्या' इसके अनुसार मनु ने यह नगरी बसाई थी। इसके द्वारों पर तोपें विद्यमान थीं। शत्रु इस पर आक्रमण करने में असमर्थ थे।

राम लक्ष्मण के विश्वामित्र के साथ प्रस्थान प्रकरण में लिखा है-

गृहाण वत्स सलिलं मा भूत्कालस्य पर्ययः।
मन्त्र ग्रामं गृहाण त्वं बलामति बलां तथा। बा.सर्ग १३ श्लोक ६

विश्वामित्र राम को मधुर वाणी में बोले- हे वत्स! जल्दी से आचमन कर लो और मन्त्र समूह बला और अतिबला नामक विद्या को ग्रहण करो।

रामायण बाल काण्ड सर्ग १५ श्लोक २ में नौका का वर्णन है। यथा-

ते च सर्वे महात्मानो मनुयःसंशितव्रताः ॥
उपस्थाप्यशुभां नावं विश्वामित्रयथाब्रुवन् ॥

आश्रमवासी व्रतधारी मुनिगण एक उत्तम नौका उपस्थित कर विश्वामित्र जी से बोले। बालकाण्ड सर्ग १७ में (प्रसंग-विश्वामित्र द्वारा राम-लक्ष्मण को अस्त्रदान) वैज्ञानिक अस्त्रों का वर्णन इस प्रकार है-विश्वामित्र कहते हैं- हे राम। मैं इन सब अस्त्रों को तुम्हें देता हूँ। लो यह महादिव्य दण्ड चक्र है। अन्य अस्त्रों के नाम-धर्मचक्र, कालचक्र, विष्णुचक्र, अति प्रचण्ड ऐन्द्रास्त्र, वज्रास्त्र, महादेवास्त्र, ब्रह्मशिर, ऐषीक, ब्रह्मास्त्र, मोदकी और शिखरी दो गदाएँ, अत्यन्त उग्र धर्मपाश, कालपाश, वरुणपाश, शुष्क और अद्र दो अशनियाँ, पैनाक, नारायणास्त्र, आग्नेयास्त्र, शिखरास्त्र, प्रथन नामक वायव्यास्त्र, ह्यशिरास्त्र, क्रौंचास्त्र, दो शक्तियाँ, भयंकर कंकाल, मुसल, कपाल, कंकणास्त्र, विद्याधर और नन्दन नाम वाले अस्त्र जो राक्षसों को मारने में उपयोगी हैं। तलवार, मानव नामवाला गन्धर्वास्त्र, प्रस्वापन(सुलाने वाला)प्रशमन, सौम्य वर्षण, शोषण, सन्ताप और विलापन (रुलाने वाला) अस्त्र, कामोत्पादक मदनास्त्र, मोहित करने वाला पैशाचास्त्र, तामस और महाबली सौमनास्त्र, संवर्त, दुर्धष, मौसल, सत्यास्त्र और परमास्त्र, भायाधरास्त्र, तेज को खींचने वाला तेज प्रभ नामक अस्त्र, सोमास्त्र, शिशिरास्त्र, त्वाष्टास्त्र, भगास्त्र, शीतेषु और मानव नामक अस्त्र आदि। ये सब अस्त्र श्री राम को दिए और उनके चलाने और रोकने की विधि बता

दी। प्रकरण 'मारीच और सुबाहु राक्षसों का पराभव'- सर्ग-१६ वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड श्लोक ६ में, १० में, १३ में राम कहते हैं- 'जैसे वायु बादलों को भगा देता है उसी प्रकार मैं इन्हें मानवास्त्र से भी उड़ाता हूँ।' यह कहकर श्री राम ने क्रुद्ध होकर एक चमचमाता मानवास्त्र मारीच की छाती में मारा। राम ने आग्नेयास्त्र निकाला और उसे सुबाहु की छाती में मारा।

रामायण-प्रसंग-सुग्रीव का शंकित होकर हनुमान को राम लक्ष्मण के समीप भेजना। किष्किन्धा काण्ड सर्ग-२ में श्री राम हनुमान के विषय में कहते हैं-

ये हनुमान उच्च कोटि के विद्वान् हैं, क्योंकि ऋग्वेद के अध्ययन से अनभिज्ञ, यजुर्वेद के ज्ञान से हीन और सामवेद के बोध में शून्य व्यक्ति ऐसी परिष्कृत बातें नहीं कह सकता। निश्चय ही इन्होंने सम्पूर्ण व्याकरण का अनेक बार अध्ययन किया है यही कारण है कि इनके इतने समय बोलने में इन्होंने कोई भी त्रुटि नहीं की है। इससे ज्ञात होता है कि हनुमान जी वेदज्ञ थे ज्ञान-विज्ञान से भली भाँति परिचित थे।

राम द्वारा सात साल के वृक्षों का बेधन करना एक वैज्ञानिक अस्त्र का ही संकेत करता है। राम ने जो स्वर्ण मण्डित बाण छोड़ा वह उन साल के सात पेड़ों को काटता हुआ, पर्वत को फोड़ता हुआ भूमि में प्रविष्ठ हो गया।

सम्पाति पक्षी नहीं वैज्ञानिक राजा था-

प्रकरण- सम्पाति जटायु का बड़ा भाई था, अपने पुत्र पौत्रों को राजपाट सौंपकर वानप्रस्थी बनकर अपने आश्रम में तपस्या कर रहा था। किष्किन्धा काण्ड सर्ग ३६ में हनुमान आदि को सीता का पता बताता है श्लोक ११-१२-१३-१४ में वैज्ञानिक यन्त्र का वर्णन देखें-इस समुद्र तट से सौ योजन की दूरी पर एक द्वीप है। उसी द्वीप में विश्वकर्मा द्वारा निर्मित लंका नाम की एक नगरी है। उसी लंकापुरी में पीताम्बर-धारिणी शोक सन्तप्ता सीता निवास कर रही है। वह रावण के राजमहल में कैद है और राक्षसियाँ उसे घेरे रहती हैं। मैं यहीं से रावण और जानकी जी को देख रहा हूँ क्योंकि हमारे पास दूर की वस्तुओं को ठीक-ठीक देखने के लिए सुपर्ण (सूर्य) विद्या से सिद्ध-निर्मित किया हुआ दिव्य चक्षुबल (दूरवीक्षण ऐनक) है। इससे प्रमाणित होता है कि प्राचीन आर्यों का ज्ञान-विज्ञान बहुत बढ़ा-चढ़ा था। रामायण काल में दूर की वस्तुओं को देखने के लिए 'चक्षुबल' नामक यन्त्र का प्रयोग होता था जिसे आज दूरबीन कहते हैं।

रामायण में सुन्दर काण्ड में हनुमान का समुद्र को पार करना वर्णित है श्लोक २ में देखें-

उत्पापाताथ वेगेनवेगवान विचारयन्।
सुपर्णमिव चात्मानं मेने स कपि कुंजरः।।२।।

तैयार होकर मार्ग के विघ्न बाधाओं की कुछ भी परवाह न कर वेगवान हनुमान जी अत्यन्त वेगपूर्वक आकाश में उड़ने लगे। उस समय कपि श्रेष्ठ हनुमान जी ने अपने आप को गरुड़ के सदृश समझा।

इससे प्रमाणित होता है रामायण काल में Monoplanes छोटे-छोटे विमान होते थे। हनुमान जी भी ऐसे विमान द्वारा श्रीलंका गये थे। आजकल भी जब कोई बड़ा व्यक्ति वायुयान द्वारा यात्रा करता है तो समाचार पत्रों में छपता है He flew to London वह लन्दन के लिए उड़ गया। जाने वाला पक्षी की भाँति उड़ कर नहीं जाता अपितु वायुयान के द्वारा जाता है। ठीक इसी प्रकार हनुमान जी भी वायुयान के द्वारा ही उड़ कर गये थे।

प्रसंग-सुग्रीव के वचनों से आश्वस्त होकर राम का हनुमान से लंका के विषय में पूछना, इस वर्णन में भी वैज्ञानिक वैभव झलकता है यथा- हनुमान राम से कहता है- लंकापुरी के चार विशाल द्वार हैं उन द्वारों में दृढ़ किवाड़ लगे हुए हैं और फाटकों को बन्द करने के लिए बड़े-बड़े परिध= अर्गल पड़े हुए हैं। उन द्वारों पर भारी और बड़े-बड़े "इषूपल" नामक यन्त्र लगे हुए हैं। जिनके द्वारा शत्रु की आक्रमणकारी सेना मार कर भगा दी जाती है। उस लंका का परिकोट स्वर्ण निर्मित है जिसको लांघना अति कठिन है। इस परकोटे में बीच-बीच में मणि, मूंगे, पन्ने एवं मोती जड़े हुए हैं। परकोटे के चारों ओर बड़ी भयंकर परन्तु शीतल एवं स्वच्छ जल से युक्त अगाध खाई है। वहाँ जो यन्त्र रखे हैं उन्हें घुमाने से खाई का जल चारों ओर बढ़ने लगता है और शत्रु सेना बाढ़ में डूब जाती है। लंका- नदी, दुर्ग, पर्वत-दुर्ग, वन-दुर्ग और कृत्रिम दुर्ग इन चार प्रकार के दुर्गों से युक्त है।

इससे प्रमाणित होता है रामायणकालीन राक्षस भी ज्ञान विज्ञान से भली भाँति परिचित थे। 'इषूपल' इस प्रकार की तोपें थीं जिनसे गोलों की बजाय शत्रु-सैन्य पर तीरों और पत्थरों की वर्षा की जाती थी। रामायण युद्ध काण्ड सर्ग १६ श्लोक १० में भी वायुयान का वर्णन है-प्रसंग गुप्तचर शार्दूल और दूत शुक का आगमन। रावण का आदेश पाकर शुक समुद्र के ऊपर आकाश में उड़ता हुआ समुद्र के तट पर सुग्रीव के पास पहुँचा और दुरात्मा रावण का सन्देश ज्यों का त्यों निवेदन कर दिया।

यहाँ यह गमन वायुयान द्वारा ही हुआ है। जैसाकि हनुमान के विषय में ज्ञात हुआ कि छोटे-छोटे वायुयान उस समय विद्यमान थे।

इसके अतिरिक्त पुष्पक विमान द्वारा श्री राम के प्रस्थान की तैयारी में विभीषण कहता है- सूर्य के समान देदीप्यमान 'पुष्पक' नामक विमान जिसे मेरा छोटा भाई रावण कुबेर को युद्ध में जीत कर बलात् छीन लाया था, जो यथेच्छ चलने वाला दिव्य और उत्तम है, हे अतुल पराक्रमी राम! यही विमान आपकी सेवा के लिए उपस्थित है। वह विमान बहुत बड़ा था क्योंकि श्रीराम ने सुग्रीव और विभीषण से कहा-अच्छा सुग्रीव अब अपनी वानर सेना सहित तुरन्त इस विमान पर सवार हो जाइये। हे राक्षसेन विभीषण। आप भी अपने मंत्रियों को साथ ले विमान पर आरुढ़ हो जाओ।

किष्किन्धा पहुँचकर राम ने विमान को वहाँ ठहरा दिया और सुग्रीव की ओर देखकर उसने कहा-हे वानरराज! तुम समस्त वानर श्रेष्ठों से कह दो कि वे सब अपनी अपनी स्त्रियों को साथ लेकर सीता के साथ अयोध्या चलें और हे महाबली। तुम भी अपनी समस्त स्त्रियों को साथ लेकर अयोध्या चलो। रामायण में लंका-वर्णन में भी बड़ा भारी ज्ञान-विज्ञान वैभव ऐश्वर्य युक्त वातावरण दर्शाया गया है।

राक्षसों के घरों में यत्र तत्र मन्त्रों का पाठ करते हुए राक्षसों की ध्वनि सुनी तथा वेद के स्वाध्याय में निरत राक्षसों को देखा। नगर के मध्य सैनिक छावनी थी। रावण के अनेक गुप्तचर थे। इनमें कोई दीक्षित-गृहस्थ के रूप में, कुछ ने जटाएँ बढ़ा रखी थीं कोई मुण्डित संन्यासी के रूप में था, कोई गोचर्म धारण करने वाला था। कोई मृगचर्म धारण करने वाला था और कई बिल्कुल नग्न थे। धनुषधारी, खड्गधारी, शतघ्नी-तोपधारी, मुसलधारी, उत्तम परिघों को हाथ में लिए हुए तथा अनेक प्रकार के आयुधों को धारण करने वाले सैनिकों को भी हनुमान ने देखा। रावण की आज्ञा से अन्तःपुर के पास सैनिकों का पहरा है। पर्वत के शिखर पर बसे रावण के अलौकिक भवन महल को भी देखा। जिसके द्वार पर घोड़े हिनहिना रहे थे, भवन के द्वार पर नाना प्रकार के रथादि यान, विमान, उत्तम नस्ल के तथा चार दाँत वाले हाथी श्वेत मेघ के समान बड़े डीलडौल वाले सुभूषित थे।

वर्तमान ग्राहकों के लिए रियायती योजना

आपकी सदस्यता को यदि आप पंचवर्षीय सदस्यता में परिवर्तित करते हैं तो चार सौ की बजाय केवल तीन सौ रु. भेज दें तो आपको पंचवर्षीय सदस्य में नामित कर लिया जायेगा। इसी प्रकार अगर आप आजीवन सदस्य बनना चाहते हैं तो बजाय एक हजार रु. के मात्र नौ सौ रु. प्रेषित करने का श्रम करें तो आपको आजीवन सदस्यता सूची में सम्मिलित कर लिया जायेगा।

सत्यार्थप्रकाश मानक संस्करण की कतिपय विशेषताएँ-

- धर्मार्य सभा के प्रधान आचार्य विशुद्धानन्द जी मिश्र के नेतृत्व में दस विद्वानों की समिति द्वारा तैयार।
- पाठभेद की समस्या का सदैव के लिए निराकरण। मुद्रण भूलों का निराकरण कर परिशिष्ट में आधार की जानकारी भी।
- मानक संस्करण का प्रत्येक पृष्ठ उसी शब्द से प्रारम्भ व समाप्त है जैसा कि मूल सत्यार्थ प्रकाश (१८८४) में है।
- मूल सत्यार्थ प्रकाश (१८८४) सदैव के लिए पाठक के समक्ष उपस्थित रहेगा।
- सुन्दर गेटअप "५.६X९.०" पृष्ठ ६५०, वजन ६०० ग्राम, पेपर बैक।

घाटे की पूर्ति पूर्ववत् दानदाताओं के सहयोग से ही संभव होगी।
आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि सत्यार्थ प्रकाश प्रेमी इस कार्य में आगे आवेंगे।

अब मात्र आधी कीमत में ₹ ४०

३५०० रु. सैंकड़ा
शीघ्र मंगवाएँ

अनेक विशेषताओं से युक्त १८८४ के मूल सत्यार्थ प्रकाश के सर्वाधिक नजदीक, तत्कालीन शैली का संरक्षण, मुद्रण अशुद्धियों से रहित सत्यार्थ प्रकाश (मानक संस्करण) अवश्य खरीदें।

मात्र ४०₹

प्राप्ति स्थल
श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास
नवलखा महल, गुलाबबाग उदयपुर - ३१३००१

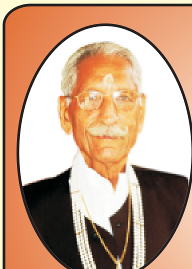

कर्मयोगी महाशय धर्मपाल
अध्यक्ष - न्यास

सुन्दर भाव और श्रेष्ठ,
कर्म का है यह इनाम।
प्रफुल्लित रखती प्रगति,
जगत् में होता है नाम॥
सत्यार्थ सौरभ
घर-घर पहुँचावें

समाचार

डा. प्रशस्यमित्र शास्त्री को संस्कृत भाषा के लिए राष्ट्रपति-सम्मान

आर्य जगत् के प्रख्यात् विद्वान् एवं संस्कृत भाषा के कवि एवं कथालेखक डा. प्रशस्यमित्र शास्त्री को इस वर्ष २०१३ के स्वाधीनता दिवस के अवसर पर राष्ट्रपति-सम्मान प्रदान करने की घोषणा की गई है। ज्ञातव्य है पालि, प्राकृत, संस्कृत एवं फारसी, अरबी इन पाँच भाषाओं के २० विद्वानों को पूरे देश से चयन करके सम्मानित किया जाता है। इसमें राष्ट्रपति की ओर से शाल, सम्मान-पत्र एवं पाँच लाख रुपये की धन राशि प्रदान की जाती है।

एक विशेष कार्यक्रम में राष्ट्रपति भवन में आयोजित समारोह में इन पुरस्कारों का वितरण होता है। डा. शास्त्री को संस्कृत भाषा में उनके पाण्डित्य एवं उल्लेखनीय योगदान के लिए यह पुरस्कार प्राप्त होगा। आपकी एक दर्जन से अधिक मौलिक कृतियाँ संस्कृत भाषा में प्रकाशित हैं जिनमें ''अनभीप्सितम्' नामक कथा संग्रह पर साहित्य अकादमी पुरस्कार भी प्राप्त हो चुका है।

''सत्यार्थ सौरभ'' परिवार उनकी इस उपलब्धि पर उन्हें बधाई एवं शुभकामना प्रकट करता है।

अथर्ववेद परायण यज्ञ सम्पन्न

आर्य समाज, हिरणमगरी, उदयपुर की ओर से दिनांक १२ सितम्बर से २२ सितम्बर २०१३ तक अथर्ववेद पारायण यज्ञ हुआ। यज्ञ के ब्रह्मा मुम्बई से पधारे आचार्य डॉ.सोमदेव शास्त्री थे। वेदपाठी गुरुकुल गौतमनगर दिल्ली के ब्रह्मचारी श्री वेदप्रकाश शास्त्री एवं वेंकटेश शास्त्री ने सुमधुर स्वर में वेदपाठ किया। आचार्य डॉ. सोमदेव शास्त्री ने यज्ञ के अवसर पर अथर्ववेद का भावार्थ, प्रयोजन आदि बताते हुए कहा कि मन की कुटिलताओं से रहित होना

ही अथर्व का मुख्य अर्थ है। हमारा मन निर्मल पवित्र हो तभी हम पवित्र परोपकार के कार्य कर आनन्दित और सुखी रह सकते हैं। आपने दस दिनों तक हुए यज्ञ के पश्चात् संध्याकालीन सत्रों में वेद, ईश्वर, जीव, प्रकृति, वेद सत्यार्थप्रकाश महिमा, राष्ट्रभाषा हिन्दी, पाखण्ड व अन्धविश्वास, सच्चा श्राद्ध, मानव जीवन जीने की कला आदि सामयिक विभिन्न विषयों पर व्याख्यान दिये।

उद्घाटन एवं समापन समारोह के अवसर पर सत्यार्थ प्रकाश न्यास के कार्यकारी अध्यक्ष श्री अशोक आर्य का सान्निध्य प्राप्त हुआ वहीं समापन अवसर पर शिकागोलैण्ड अमरीका में आर्य समाज के संस्थापक अध्यक्ष, कैंसर रोग विशेषज्ञ डॉ.सुखदेव चन्द सोनी मुख्य अतिथि थे। अमरीका से पधारे श्री एवन सोनी, श्री हरिकृष्ण दुग्गल एवं श्रीमती बीना दुग्गल विशिष्ट अतिथि थे। इनके अतिरिक्त विभिन्न प्रवचन के सत्रों में अनेक समाजसेवी, धर्म प्रेमीजन लाभान्वित हुए। संन्यासी प्रवासानन्द जी व आर्यानन्द जी भी इस अवसर पर उपस्थित थे। श्री इन्द्र देव पीयूष के भजनों का लाभ इस अवसर पर प्राप्त हुआ।

इस आयोजन के मुख्य संयोजक डॉ. अमृतलाल तापड़िया ने अतिथियों का स्वागत किया। आर्य समाज के प्रधान भंवरलाल आर्य, डॉ.शारदा गुप्ता, कोषाध्यक्ष प्रेमनारायण जायसवाल, कृष्ण कुमार सोनी, मुकेश पाठक, संजय शांडिल्य, अनन्त देव शर्मा, रामदयाल आदि ने उपरणा, नारियल एवं शॉल भेंट कर अतिथियों का सम्मान स्वागत किया। मंत्री श्रीमती ललिता मेहरा ने आभार ज्ञापित किया। समापन समारोह अवसर पर ऋषि लंगर का आयोजन हुआ जिसमें ४०० धर्मप्रेमी ऋषिभक्त सम्मिलित हुए।

रामदयाल मेहरा, प्रचार मंत्री, आर्य समाज हिरणमगरी,उदयपुर

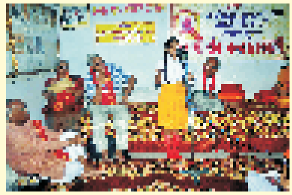

स्वतंत्रता सेनानी श्री हरि सिंह जी आर्य की छठी पुण्यतिथि पर दिनांक १ सितम्बर २०१३ (रविवार) को स्वामी सेवानन्द सरस्वती वैदिक धर्म प्रचार-प्रसार न्यास, जयपुर की ओर से छात्र-छात्राओं की वाद-विवाद प्रतियोगिता का आयोजन किया गया।

इस प्रतियोगिता में जयपुर और अजमेर शहर की बीस शिक्षण संस्थाओं के विद्यार्थियों ने भाग लिया। कनिष्ठ वर्ग को 'तीर्थ यात्राएँ धार्मिकता का प्रमाण है?' और वरिष्ठ वर्ग को विषय- 'भ्रष्टाचार देश की सबसे बड़ी समस्या है?' दिया गया। दोनों वर्गो में कुल ४२ विद्यार्थियों ने भाग लिया।

कार्यक्रम श्री एम.एल. गोयल की अध्यक्षता में हुआ। इस अवसर पर श्री सत्यव्रत सामवेदी, डा. सुभाष वेदालंकार, डा. रामपाल शास्त्री, डा. मदन मोहन जावलिया, श्रीमती अरूण देवड़ा उपस्थित थे। विजेताओं को नकद पुरुस्कार वितरित किए गये। कार्यक्रम संयोजिका श्रीमती सरोज आर्या के अनुसार श्रीमती मधुर भाषिणी कपूर ने स्वतंत्रता सेनानी श्री हरि सिंह आर्य के जीवन पर प्रकाश डाला। न्यास मंत्री श्री ओ.पी. वर्मा ने सभी को धन्यवाद दिया।

- ओम प्रकाश वर्मा (मंत्री)
स्वामी सेवानन्द वैदिक धर्म प्रचार-प्रसार न्यास, जयपुर।

निर्वाचन समाचार

आर्य समाज, अकोला

आर्य समाज अकोला, महाराष्ट्र का नव-निर्वाचन दिनांकः ०१.०६.२०१३ को सम्पन्न हुआ। इसमें निम्न कार्यकारीणी सर्वसम्मति से निर्वाचित की गई। प्रधाना-डॉ. मन्जुलताजी विद्यार्थी, मंत्री- डॉ. हुकुमसिंह आर्य, कोषाध्यक्ष-श्री नारायण सराफ।

मंत्री-आर्य समाज, अकोला

जिला सभा के चुनाव सम्पन्न-श्री मदन लाल जी आर्य कादेड़ा सम्भागीय प्रतिनिधि एवं उपप्रधान राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के सान्निध्य एवं श्री गणपत लाल शर्मा की अध्यक्षता में भीलवाड़ा आर्य उप प्रतिनिधि सभा के चुनाव दिनांकः १५.०६.२०१३ को सर्वसम्मति से निम्न प्रकार सम्पन्न हुए:- संरक्षक-श्री राज किशोर मोदी, प्रधान-श्री गणपत लाल आर्य, मंत्री-श्री रामकृष्ण छाता, कोषाध्यक्ष-श्री गोपाल लाल शर्मा।

मंत्री-रामकृष्ण छाता, भीलवाड़ा

आर्य केन्द्रीय सभा, गुड़गांव का वार्षिक अधिवेशन श्री ओमप्रकाश कालड़ा एवं श्री बलदेव कृष्ण गुगलानी की अध्यक्षता में आर्य समाज नई कालोनी में सम्पन्न हुआ। जिसमें प्रधान-मा. सोमनाथ, मंत्री-श्री बलदेव कृष्ण गुगलानी, कोषाध्यक्ष-श्री नरेन्द्र आर्य निर्वाचित हुए।

ओम प्रकाश चुटानी, गुडगांव

सभी निर्वाचित अधिकारियों को सत्यार्थ सौरभ परिवार की ओर से हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ।

आर्य समाज, शाहपुरा, भीलवाड़ा द्वारा वेद प्रचार का सघन कार्यक्रम दिनांक २२ जून २०१३ से २४ जून २०१३ तक आर्य समाज, शाहपुरा में यज्ञ, सत्संग व भजनोपदेश के सुन्दर कार्यक्रम के साथ सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम आर्य समाज भवन के अतिरिक्त कुछ महानुभावों के घर पर भी हुआ। कुंवर भूपेन्द्र सिंह जी व पंडित लेखराज शर्मा के सम्मोहक भजनोपदेश इस कार्यक्रम के प्रेरणास्रोत थे।

-कन्हैयालाल आर्य,प्रधान,आर्य समाज,शाहपुरा

वैदिक धर्म दीक्षा समारोह

ओडीसा के गुलाई बहाल ग्राम में उत्कल आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में विभिन्न मतावलम्बी २०० से अधिक परिवारों को वैदिक धर्म स्वीकार कराया गया। इसके लिए पूज्य स्वामी धर्मानन्द जी तथा वानप्रस्थी विशिकेशनशास्त्री धन्यवाद के पात्र हैं।

हलचल

नीरजा भनोत- साहस की प्रतीक

इन्हें भूलें नहीं

७ सितम्बर १९६३ को जन्मी विमान परिचारिका नीरजा भनोत का ५ सितम्बर' १९८६ को बलिदान हो गया। महारानी लक्ष्मीबाई का भी बलिदान इसी आयु में हुआ था। नीरजा का शव, उनके जन्मदिन ७ सितम्बर को उनके घर चण्डीगढ़ (पंजाब) लाया गया था।

मुम्बई से न्यूयार्क जा रहे, विमान का आतंकवादियों ने कराची में अपहरण कर लिया था। नीरजा ने अपना बलिदान देकर, तीन सौ से अधिक यात्रियों की जान बचाई थी। विमान-अपहरण की उस घटना में बचे लोगों ने माना कि नीरजा किसी फरिश्ते से कम नहीं थी। उसने यात्रियों को बड़ी सावधानी से विमान से बाहर निकाल कर ऐसे रक्षा की, मानो एक माँ ने अपने बच्चों को बचाया हो।

और अन्त में आतंकवाद की एक गोली, नीरजा के सीने में लगी जो हृदय के ममत्व को चीर कर निकल गयी। साहस की प्रतीक नीरजा को मरणोपरान्त भारत सरकार ने अशोक चक्र से सम्मानित किया।

-डॉ. गुरुकुलानन्द कच्चाहारी, कच्चाहारी कुटी, पिथौरागढ़ (उत्तराखंड)

आर्य समाज तिजारा, अलवर **के वार्षिक चुनाव में प्रधान श्री रामनिवास आर्य, मंत्री फतहसिंह सैनी, एवं फूलसिंह सैनी कोषाध्यक्ष निर्वाचित हुए। सभी को सत्यार्थ सौरभ परिवार की ओर से बधाई एवं शुभकामनाएँ।** -रामनिवास सैनी, प्रधान

आर्य समाज, हरिनगर, नई दिल्ली, **श्रीमती राजेश्वरी आर्या, प्रधान, श्री पाल आर्य, मंत्री आप दोनों को बहुत बहुत बधाई, आशा करते हैं कि अन्य अधिकारियों का उचित मनोनयन करके आर्य समाज की गतिविधियों को नवीन आयाम प्रदान करेंगे।** -देवराज आर्य मित्र, नई दिल्ली

प्रतिस्वर

अगस्त २०१३ का सत्यार्थ सौरभ बराबर मिला। सरसरी निगाह दौड़ाई। तो ठहरकर सोचना पड़ा कि क्या सामग्री आपने जुटाई है, प्रमाण और उदाहरण सहित। चौबीसों घंटे का काम लगता है। बत्तीस पृष्ठों की पत्रिका हजारों का काम कर रही है, आपके प्रयत्न से। उमाशंकर अग्रवाल की कविता-शहीदों की कल्पना का उल्टा फल लोगों को मिल रहा है। कलेजा दहलने वाली बात है। कौन ध्यान देगा-चिराग लेकर खोजने की आवश्यकता है।

दूसरी कविता कविवर हरिओम पंवार जी की- घायल भारत माता की तस्वीर अच्छी दिखाई है। कवि जी का हृदय भी एकदम घायल दिखता है। उन्होंने जो दिखाया। किसने देखा। और किसने भारत माँ की पीड़ा निहारी। दोहरे, तिहरे चेहरे वाले क्या देख पायेंगे? देश के कर्णधार जो अंग्रेजी और उर्दू में जनता को सम्बोधित करता है, हिन्दी की यह अमर वाणी वे पढ़ सकेंगे? उनके कानों तक यह संदेश कोई पहुँचा सकेगा? लगभग एक पृष्ठ की कविता में अतीत और वर्तमान का चमकता चेहरा नजर आता है। कमजोर रगों को दवाया है। उनकी पीड़ा सारे देश की पीड़ा है। कितना गहन विचार-विमर्श के पश्चात् ऐसी कविता कलम की नोक से निकलती है। अन्न-जल और सुख सुविधाओं को परे रखकर ऐसी रचना बाहर आती है। जनता को झकझोर देती है। कवि का चेहरा और बहुत कुछ कहना चाह रहा है। कविता के एक बार के पाठ से संतुष्टि नहीं होती है। पंक्ति-पंक्ति, अक्षर-अक्षर, बार-बार पढ़ने की इच्छा होती है। यदि इस कविता की व्याख्या की जाय तो एक विशाल ग्रन्थ बन जायगा। हर शब्द कोई न कोई संदेश अवश्य देता है। उसको समझने की आवश्यकता है, समझाने की आवश्यकता है। कवि जी की कविता के लिए 'धन्यवाद' बहुत छोटा शब्द है। फिर भी यही कह सकेंगे कि हमारी झोली में धन्यवाद ही है। धन्यवाद स्वीकारिए कवि जी-धन्यवाद

- सोनलाल नेमधारी, मारीशस

सत्यार्थप्रकाश ने बदला जीवन

कुछ वर्ष पहले मैं माँस, मछली, अण्डा आदि तामसी आहार खाता था क्योंकि मैंने सुन रखा था कि तामसी आहार खाने-पीने का अधिकार वेदों में लिखा है। और तन्त्र-आदि अशुद्ध विद्याओं का उद्गम भी वेद ही है और भूत-प्रेत आदि के विषय में भी वेद में लिखा। जबकि मैंने वेद ना तो कभी देखे और ना ही पढ़े और जिन लोगों से मैने ये सारी बातें जानी उन्होंने भी वेद ना तो कभी देखे और ना ही कभी पढ़े, केवल वेदों के बारे में सुना था।

मैंने ''यूनिक की सामान्य अध्ययन पुस्तक'' के विभाग भारतीय इतिहास में पढ़ा था कि ऋग्वैदिक कालीन लोगों का मुख्य भोजन पदार्थ था अन्न, फल, दूध, दही, घी एवं माँस। अन्त में यव, धान्य, उड़द एवं मूँग का प्रयोग करते थे। पेय पदार्थ में सोमरस का पान करते थे। माँस में भेड़, बकरी एवं बैल का माँस खाते थे। गाय को ''अघ्न्या'' (न मारने योग्य) माना जाता था। फिर भी कहीं-कहीं पर वध के प्रमाण मिलते हैं, आर्य लोग नमक व मछली का प्रयोग नहीं करते थे। यूनिक सामान्य अध्ययन (भारतीय इतिहास)। जब मैंने ऐसा पढ़ा तो मुझे माँस आदि खाने में कभी कोई परेशानी नहीं हुई क्योंकि मैंने पढ़ा था कि वेदों में खाने-पीने (माँसाहार आदि) की कोई मनाही नहीं है।

लेकिन जब मैने ''सत्यार्थ प्रकाश'' को पढ़ा तब जाना कि वेद में कहीं नहीं लिखा कि माँस खाओ। और यह भी जाना कि सनातन धर्मी कैसे- माँस आदि खाने लगे क्योंकि माँसाहारी समुदायों ने अपने-अपने पंथ खड़े कर लिए और वेदों को बदनाम करने के लिए उन्होंने ये कुचक्र चलाया कि जो हम कह रहे हैं वो सब वेद में लिखा है जैसे-वाममार्गी आदि। और महर्षि दयानन्द सरस्वती जी लिखते हैं कि वेदों के बारे में जानना है तो वेदों का अध्ययन और अध्यापन होना चाहिए। और इसके बाद मेरे मन में वेदों को पढ़ने की इच्छा जागृत हुयी और मैंने माँस, मछली, अण्डा आदि तामसी आहार हमेशा के लिए त्याग दिया क्योंकि वेद हमें ऐसा करने की मनाही करते हैं और जब मैंने वेदों को नहीं पढ़ा था तब भी यही मानता था कि वेदों में ही सारे संसार का सर्वश्रेष्ठ ज्ञान है और आज भी मानता हूँ जब मैं वेद पढ़ रहा हूँ और हमेशा मानता रहूँगा। यदि हमें श्रेष्ठ बनना है तो वेदों के अनुसार चलना होगा उनके अनुसार अपना जीवन बनाना होगा तभी भारत वर्ष सबसे शक्तिशाली और पुण्यशाली बनेगा। इसीलिए इस संसार में सर्वश्रेष्ठ है तो केवल एक वेदमत, सत्य है तो केवल वेदमत बाकी जितने भी मत हैं वो सब ''सच और झूँठ का पुलिंदा मात्र हैं'' यदि अपना जीवन सफल बनाना है तो वेदों की ओर लौटो और वेदों के अनुसार अपना जीवन बना लो तो सफलता सुनिश्चित है यही मेरी समस्त भारतवर्ष से और समस्त विश्व से कामना है। अन्त में मैं महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का बहुत-बहुत आभारी हूँ और उन्हें धन्यवाद देना चाहता हूँ कि उन्होंने ''सत्यार्थ प्रकाश'' जैसे अद्वितीय और अनुपम ग्रन्थ की रचना की, और उन्होंने वेदों के विषय में फैली मनगढ़न्त और कुत्सित बातों को हमें बताया और हमें बताया कि सत्य यदि जानना है तो वेदों का पठन-पाठन होना चाहिए, और ये ''माँस आदि का खाना वेदों में कही नहीं लिखा'' और जो इस बात के विरुद्ध हैं वो केवल गपोड़े हैं। सत्य को तभी जानोगे जब वेदों को पढ़ोगे। आगे महर्षि दयानन्द सरस्वती जी वो राजहंस, परमहंस हैं जिन्होंने ''दूध का दूध और पानी का पानी'' करके परमसत्य के दर्शन कराए और हमें अपनी जड़ों से जोड़ दिया।आज ''सत्यार्थ प्रकाश'' ना जाने कितने मेरे जैसे भटके हुए लोगों को रास्ता दिखा रहा है जैसे मुझे सत्य की रोशनी प्राप्त हुई है वैसे ही ये रोशनी प्रत्येक इन्सान को प्राप्त हो इसके लिए इस ग्रन्थ का अधिक से अधिक प्रचार-प्रसार होना चाहिए। आप यह कार्य कर रहें हैं पर जरूरी बात यह है कि ग्रन्थ की छपाई और रूपरेखा (प्रिन्ट) सुव्यवस्थित और मनमोहक हो ताकि किसी व्यक्ति को ग्रन्थ पढ़ने में असुविधा ना हो और वह व्यक्ति ग्रन्थकर्त्ता की बात को सही तरीके से पढ़ सके और समझ सके और सही तरीके से समझ करके और लोगों को भी समझा सके, उसका प्रचार कर सके।

आर्य दिनेश कुमार कर्ण , हंसारी टपरियाँ (झाँसी) उ.प्र.

Dying pattern of birds

Speculative thoughts or well researched? Did God empower the birds ? Did you ever see a bird passing away ?

A THOUGHT

Are the Flying free birds Crown Creation of nature? Where do birds go to die?

A strange questions but the answers are stranger or probably there is no answer at all.

One fine morning, seated at my favorite tea spot, overlooking the evergreen banyan tree against the background of the pleasantly warm early morning sun watching my avian friends, a mix of parakeets, sparrows and Mark twain favorite friends the Indian crows; all of them permanent occupants of this peaceful tree colony; the following thought just popped into my head. I have been watching my feathered friends, chirping, cooing and quarreling so sweetly ever so often but I have never seen any one of them ever lying dead either under that tree or anywhere in the vicinity or our residential colony or surprisingly even all over the world.

> इस आलेख को पढ़ें और विचार करें कि क्या किसी ने किसी पक्षी को स्वाभाविक मृत्यु का ग्रास बनते देखा है?
>
> - संपादक

Think world is populated with flocks of birds, but strangely, one never see bodies of dead birds lying around, rarely one does see bird remains left behind by a careless cat or a pigeon killed in flight by the sharp kite string during the makar sankranti, a kite festival.

But, lying around dead from a natural cause? Never! So do birds live forever? Well! When no answer comes to mind, what does one do? Well for many unanswered questions one does ask GURU GOOGLE! That's exactly what I did..

Guess what ? Google had no logical answer.!

To find the answer to my question, I browsed bird watching sites skimmed through ornithology resources but with no luck, just vague and funny answers. Disappointed and fatigued from the Google search; just before signing off, I came across a very interesting article on "Dying Pattern of birds" and cited below was a controversial theory by Late Cork Bishop Cornelius Lucey that begins with the Question. "Where do birds go to die?" Bishop challenged anyone to produce evidence of a bird that had died from a natural cause. Bishop Lucey distinguished death from natural causes and death by predator, or death through car accident. Death through accidental or deliberate means resulted in mangled bodies we all have seen, but it is a fact, dead birds are so difficult to locate that scientists use birders to help track population in order to estimate number of annual avian deaths.

The Bishop, who had an in-depth knowledge of the life-patterns of bees, conducted the study of birds, with the same gusto. In the case of Bees, the Bishop explained that bees died, by rising, into the "upper air", and there they literally were destroyed through a natural disintegration process. After the study of birds he concluded that as birds had an inner sensory device, which told them when to migrate and like the bees they too had an inner sensory device which told them when it was time to die, or when their life cycle was complete.

On the premonition of death, they too like the bees rise up higher and higher till they disintegrate in the upper air. This unpublished theory is the closest answer to my query.

This triggers the following thought; if we go by the Bishop's hypothesis on the dying pattern of birds for which as of date there is no counter solid scientific theory, then it would not be out of place to conclude that birds are at a higher plane than humans since the birds actually KNOW when they are going to die, something that even the so called evolved, aware and intelligent human race does not know! That when a bird knows that it has lived enough, seen enough, it can happily leave its body at will by flying high-up and just disintegrating; no age related aches, pains of suffering.

WOW! Our feathered friends seem to be more evolved than humans, they live that freedom we all would die for; freedom to go where they want, when they want, cross all borders sans passport, the power to detach themselves from the young ones as soon as they are ready to take their own course and now it seems they know when they will die and where to die, Real cool! They can attain **MOKSHA** at will.

A Thereby lingers the thought; Is Man, the self-proclaimed most evolved living being really at the apex of evolution pyramid?or please tell me where the birds go to die.

Shri K Govindan Krishnamenon

बेटी

गर्भ समाज और घर, बना है बेटी को डर
यह कैसी विडम्बना, कठिन हुआ उसका जीना
हमारी संस्कृति
कहती
यत्र नार्यस्तु
पूज्यन्ते
रमन्ते तत्र देवताः
पर हम इसे भुला बैठे
पश्चिमी अन्ध नकल में
बेटी को किया अर्ध नग्न
इस ओर ध्यान देते
उसका नहीं होता दमन
शिक्षित तो हुए हम, बेटा बेटी का अन्तर
समाज में न हुआ कम
घटती बिटिया इसका उत्तर
बेटी तो है बिंदिया, दो परिवारों की कड़ी
घर आँगन की शोभा, जल्दी होती है बड़ी
लाडो को जख्म नहीं, उसे ममता दुलार दो
यह बहन साथी जननी, इसे जन्म सम्मान दो

- डॉ. तारा सिंह, मेरठ

संरक्षक मण्डल - सत्यार्थ सौरभ (₹ ११,०००)

स्वामी (डॉ.) ओमानन्द सरस्वती, श्रीमान् आनन्द कुमार आर्य, श्री आर.डी. गुप्त, श्री भवानी दास आर्य, श्री सुरेश चन्द्र अग्रवाल, श्री रतिराम शर्मा, श्री दीनदयाल गुप्त, श्री बी.एल. अग्रवाल, श्री कै. देवरत्न आर्य, श्री चन्दूलाल अग्रवाल, श्री मिठाईलाल सिंह, श्री नारायण लाल मित्तल, श्री सुधाकर पीयूष,श्रीमती शारदा गुप्ता, आर्य परिवार संस्था कोटा, श्रीमती आभाआर्या, गुप्त दान दिल्ली, आर्यसमाज गाँधीधाम, गुप्तदान उदयपुर, श्री राजकुमार गुप्ता एवं सरला गुप्ता, श्री मोती लाल आर्य, श्री लक्ष्मण सराफ, श्रीमती पुष्पा गुप्ता, श्री जयदेव आर्य, श्री श्रवण कुमार गुप्ता, श्रीमती सरोज वर्मा, श्री विवेक बंसल, श्री दीपचंद आर्य, श्री एम.पी. सिंह, प्रो. आर.के.एरन, श्री खुशहालचन्द आर्य, श्री विजय तायलिया, श्री वीरेन्द्र मित्तल, स्वामी (डॉ.) आर्येशानन्द सरस्वती, स्वामी प्रवासानन्द सरस्वती, स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती, श्री राव हरिश्चन्द्र आर्य, श्री भारतभूषण गुप्ता, श्री कृष्ण चौपड़ा, श्री रामप्रकाश छाबड़ा, श्री विकास गुप्ता, श्री एम. विजेन्द्र कुमार टाक, श्री नरेश कुमार राणा, डॉ.मोतीलाल शर्मा, डी.ए.वी.एकेडमी, टाण्डा, श्री प्रधान जी, मध्यभारतीय आ. प्र. सभा, श्री रघुनाथ मित्तल, मिश्रीलाल आर्य कन्या इण्टर कॉलेज, टाण्डा, श्री प्रहलादकृष्ण एवं श्रीमती प्रभा भार्गव श्री लोकेश चन्द्र टांक, श्रीमती गायत्री पंवार, डॉ.वेद प्रकाश गुप्ता, श्री वीरमुखी, डॉ. अमृतलाल तापड़िया, आर्य समाज हिरणमगरी, उदयपुर, श्री सुरेशपाल, यू.एस.ए.

स्त्री को शिक्षा का अधिकार

स्त्री शिक्षा- आज जब महिलाएँ जीवन के हर क्षेत्र में अग्रगण्य स्थान प्राप्त कर रहीं हैं तो इस संदर्भ में मध्यकालीन भारत में जन्मी तथा महर्षि दयानन्द जी के समय तक भी मौजूद विकराल, भयावह, विपरीत स्थिति हमें स्मरण भी नहीं होती, जबकि नारियों को नरक का द्वार घोषित कर उसे मात्र भोग वस्तु मान लिया गया था। ''यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवता'' का भाव तिरोहित हो चुका था। अतः नारी शिक्षा की जरूरत ही नहीं समझी गई। अतः वेद शास्त्रों के पठन पाठन की बात तो दूर, अक्षर ज्ञान से भी उसे विरत् कर दिया गया था। महर्षि जी ने सत्यार्थ प्रकाश में जो मानव निर्माण योजना प्रस्तुत की उसके लिए तो उपरोक्त स्थिति अत्यन्त घातक थी। मानव जीवन निर्माण का प्रथम सोपान माता (नारी) के शिक्षित हुए बिना पूर्ण होना असंभव था। आर्यावर्त्त के समस्त ज्ञात इतिहास में, मध्यकालीन भारत को छोड़ ऐसी विषम परिस्थिति कभी भी परिलक्षित नहीं होती। प्राचीन काल में कन्याओं की शिक्षा का समुचित प्रबन्ध था। वेद ज्ञान से लेकर विशिष्ट कलाओं के नैपुण्य में पारंगत महिलाओं का नाम इतिहास में प्रसिद्ध है। लोपामुद्रा, अपाला, विश्ववारा, रोमशा, घोषा, श्रद्धा, कामायनी, उर्वशी, यमी, लीलावती, भारती, गार्गी, आदि के नाम मूर्धन्य तत्त्वज्ञों में गिने जाते हैं। मण्डन मिश्र की पत्नी भारती देवी ने शंकराचार्य से शास्त्रार्थ के समस्त मध्यस्थता की थी, बिना वेदशास्त्रविद् हुए यह कैसे संभव था? शंकर दिग्विजय में भारती देवी के बारे में लिखा है- ''शास्त्राणि सर्वाणि षडङ्ग वेदान् काव्यादिकान् वेत्ति यदत्र सर्वम्'' अर्थात् वह छः शास्त्रों और छः अंगो सहित चारों वेदों और सम्पूर्ण काव्यादि ग्रन्थों में निष्णात थी। इतना ही नहीं ''तन्नास्ति न वेत्ति यदत्र बाला'' ऐसा कोई विषय नहीं था जिसका उसे ज्ञान न हो। परम विदुषी गार्गी देवी का ब्रह्मवेत्ता याज्ञवल्क्य से प्रश्नोत्तर प्रसिद्ध है। महर्षि दयानन्द स्त्रियों का वही गौरवशाली स्थान पुनः देखना चाहते थे। इसलिए सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास में उन्होंने लिखा- ''जैसे पुरुषों को व्याकरण, धर्म और व्यवहार की विद्या न्यून से न्यून अवश्य पढ़नी चाहिए वैसे स्त्रियों को भी व्याकरण, धर्म, वैद्यक, गणित, शिल्प विद्या तो अवश्य ही सीखनी चाहिए।''

महर्षि जी की स्पष्ट मान्यता थी कि स्त्रियों को शिक्षा से वंचित रखना जीवन के संतुलित विकास में व्यवधान उपस्थित करना है। इसलिए उन्होंने उपरोक्त न्यूनतम पाठ्यक्रम उपस्थित किया। यों उनकी अभिलाषा थी कि महिलाएँ गार्गी जैसी विदुषी बनें। सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास में महर्षि लिखते हैं- ''भारत की स्त्रियों में भूषणरूप गार्गी आदि वेदादि शास्त्रों को पढ़के पूर्ण विदुषी हुयीं थीं..... देखो! आर्यावर्त्त के राजपुरुषों की स्त्रियाँ धनुर्वेद अर्थात् युद्धविद्या भी अच्छी प्रकार जानती थीं। क्योंकि जो न जानती होतीं तो कैकयी आदि दशरथादि के साथ युद्ध में क्योंकर जा सकतीं?''

मध्यकाल में स्त्रियों को पढ़ने के अधिकार से वंचित करने के लिए कपोलकल्पित श्रुतियों का सहारा लिया गया। इसी से महर्षि जी ने नारी शिक्षा के समर्थन में सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास में वेद शास्त्रों के प्रमाण उद्धृत किये।

यजुर्वेद २०/८६ मंत्र का भावार्थ करते हुए महर्षि जी लिखते हैं-

''कन्याओं को चाहिए कि ब्रह्मचर्य से विद्या और सुशिक्षा को समग्र ग्रहण करके अपनी बुद्धियों को बढावें।

ब्रह्मचर्य कन्या युवानं विन्दते पतिम् (अर्थव ११-५-१८)

''....................वैसे (कन्या) कुमारी ब्रह्मचर्य सेवन से वेदादि शास्त्रों को पढ़ पूर्ण विद्या और उत्तम शिक्षा को प्राप्त युवती होके, पूर्ण युवावस्था में अपने सदृश, प्रिय, विद्वान्, पूर्ण युवावस्था युक्त पुरुष को प्राप्त होवें। इसलिए स्त्रियों को भी ब्रह्मचर्य और विद्या का ग्रहण अवश्य करना चाहिए। (सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास)

''क्या स्त्री लोग भी वेदों को पढ़ें? के उत्तर में लिखते हैं- अवश्य! देखो श्रौत सूत्रादि में 'इमं मंत्र पत्नी पठेत्' अर्थात् स्त्री यज्ञ में इस मंत्र को पढ़े। जो वेदादि शास्त्रों को पढ़ी न

होवे तो यज्ञ में स्वर सहित मंत्रों का उच्चारण और संस्कृत भाषण कैसे कर सकें? (सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास)

अन्य प्रमाण-

१. 'इङःश्च' (अष्टाध्यायी ३/३/२१) सूत्र की व्याख्या में पंतजलि मुनि लिखते हैं

'उपेत्याधीतेऽ स्याः उपाध्यायी, उपाध्याया' अर्थात् जिसके पास जाकर पढ़े वह स्त्री उपाध्यायी या उपाध्याया कहलाती है। यदि स्त्री पठित न हो तो उसके पास जाकर पढ़ने का प्रश्न ही नहीं होता।

२.'अथ य इच्छेद् दुहिता में पण्डिता जायेत'

(वृहदारण्यकोपनिषद् ६/४/१७)

अर्थात् यदि पिता चाहता है कि मेरी पुत्री विदुषी बने.......। इस प्रकार जिस काल में स्त्री-शिक्षा को पूर्णतः प्रतिबन्धित कर रखा था, महर्षि जी ने शास्त्र प्रमाणों के अलावा समाज शास्त्रीय व मानवीय दृष्टिकोणों से इसे अनिवार्य घोषित किया।

स्त्रियों का उपनयन- इस सम्बन्ध में महर्षि जी ने सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास लिखा है- "द्विज अपने घर में लड़कों को यज्ञोपवीत और कन्याओं का भी यथायोग्य संस्कार करके यथोक्त आचार्य कुल अर्थात् अपनी अपनी पाठशाला में भेज दें। यहाँ यह शंका हो सकती है कि महर्षि जी कन्याओं का लड़कों के समान यज्ञोपवीत नहीं करवाना चाहते थे। परन्तु यह धारणा बना लेना महर्षि जी के अभिप्राय के विपारीत होगा। प्राचीनकाल में कन्याओं का उपनयन संस्कार होता था। कुछ प्रमाण द्रष्टव्य हैं-

पुराकल्पे तु नारीणां मौञ्जी बन्धन मिष्यते।
अध्ययनं च वेदानां भिक्षाचर्य तथैव च।।(निर्णयसिन्धु तृतीय परिच्छेद)

इसी प्रकार -

'प्रावतां यज्ञोपवीतिनीमभ्युदानयञ्जपेत्- सोमोऽददद् गन्धर्वाय इति' (गोभिलीय गृह्य सूत्र- २/१/१६)

अर्थात् कन्या को वस्त्र पहने हुए तथा यज्ञोपवीत धारण किये हुए, पति के पास लाए तथा यह मंत्र पढ़े-सोमोऽददद्। इससे स्पष्ट है कि विवाह के समय कन्या का उपनीत होना अनिवार्य है। हारीत संहिता में स्त्रियों के दो भेद किये हैं १. ब्रह्मवादिन्यः, २. सद्योवध्वः। पं. मध्वाचार्य इसकी टीका में लिखते हैं स्त्रियाँ दो प्रकार की होती हैं एक ब्रह्मवादिनी जिनका उपनयन होता है, जो अग्निहोत्र करती हैं, वेदाध्ययन करती हैं, और अपने परिवार में भिक्षावृत्ति करती हैं और दूसरी सद्योवध्वः जिनका शीघ्र विवाह होने वाला है, इनका उपनयन कराके शीघ्र विवाह करा देना चाहिए।

सातवीं शताब्दी के ऐतिहासिक राजा हर्षवर्धन की सभा के रत्न महाकवि वाणभट्ट ने अपने विश्वविख्यात महाकाव्य कादम्बरी में महाश्वेता का वर्णन करते हुए लिखा है- "ब्रह्मसूत्रेण पवित्रीकृतकायाम्" अर्थात् जिसका शरीर ब्रह्मसूत्र धारण करने के कारण पवित्र था। ब्रह्मसूत्र यज्ञोपवीत का ही अपर नाम है। स्त्रियों के उपनयन में स्वयं वेद का प्रमाण है।

भीमा जाया ब्राह्मणस्योपनीता (ऋ. १०/१०६/४)(संस्कार भास्कर से साभार)

अतएव यह बिल्कुल स्पष्ट है कि प्राचीन भारत में स्त्रियों को पुरुषों के समान ही वेद शास्त्रादि पठन-पाठन का एवं उपनयन का पूर्ण अधिकार प्राप्त था इसी कारण अनेक नारी रत्न वेद मंत्र द्रष्टा ऋषिकाएँ भी हुयीं। मध्यकाल में भारत में जब नारी को शिक्षा के अधिकार से पूर्णतः वंचित कर दिया गया था तब महर्षि जी ने उनके इस अधिकार को पुनः लागू किया। अतः यह तो संभव ही नही कि महर्षि जी कन्याओं के उपनयन के हामी न हों। उन्होंने उपनयन विधान में कन्याओं के लिए जो 'यथायोग्य संस्कार करके' का प्रयोग किया है उसका तात्पर्य यही है कि यज्ञोपवीत संस्कार के अन्तर्गत कुछ क्रियाएँ ऐसी हैं जैसे मुण्डन, भिक्षा, वस्त्रादि प्रदान, आदि जिनमें बालक बालिका में परम्परागत विभेद आवश्यक है इसलिए 'यथायोग्य' का तात्पर्य 'यथायोग्य यज्ञोपवीत संस्कार' लिया जाना चाहिए। स्त्रियों की वैदिक शिक्षा का पुनः प्रतिपादन कर ऋषि दयानन्द ने एक महान् सामाजिक क्रान्ति का उद्घोष किया है। उनकी इसी उदार भावना को दृष्टि में रख कर फ्रांस के सुप्रसिद्ध मनीषी लेखक रोमां रोलाँ ने लिखा था- "Dayanand was no less generous and no less bold in his crusade to improve the condition of women, a deplorable one in india" (The builders of unity, Chapter VI in the book "The Life of RamaKrishna")

आर्यरत्न डॉ. ओमप्रकाश (म्याँमार) स्मृति पुरस्कार

* न्यास द्वारा ON LINE TEST प्रारम्भ।
* वर्ष में तीन बार दिया जावेगा ५१०० रु. का उपरोक्त पुरस्कार।
* आयु, लिंग, योग्यता की कोई बाधा नहीं। आबाल-वृद्ध, नर-नारी, छोटे-बड़े सभी पात्र हैं।
* विश्व भर के लोगों से इस ON LINE TEST में भाग लेने का अनुरोध।

बेवसाइट - www.satyarthprakashnyas.org

ऐसा होता है अमर-देहदान

वानप्रस्थ सत्यनारायण आर्य

किसी समय ऐसा युग था जब रक्तदान को जानते तक नहीं थे। आज भूमण्डल में चारों तरफ रक्तदान शिविर हो रहे हैं। रक्तदान देने वाले दानदाताओं की कमी नहीं है, रक्तदान के लिए रक्तदान देने वालों की कतारें लग जाती हैं। जगह-जगह रक्त बैंक कायम हो चुके हैं एवं रक्त बैंकों की संख्या दिन चार गुनी रात आठ गुनी बढ़ती जा रही है। अब जमाना रक्तदान को जीवनदान समझने लगा है।

इसी प्रकार से शरीर के कई अंगों किडनी आदि के दान का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। आँखों का दान भी मरणोपरान्त हो रहा है। एक अन्धा जिसने कभी संसार को नहीं देखा, कैसा संसार है, देखने लगता है क्या कमाल है?

महर्षि दधीची का असुरों को नष्ट करने के लिए अपनी हड्डियों का दान देना सर्वविदित है।

प्रयोगों से ही आज तक विज्ञान का विकास हुआ है, होता जा रहा है, वैज्ञानिक विकास एक से एक उन्नति में आगे से आगे बढ़ते जा रहे हैं। कम्पटीशन हो रहा है।

देह-दान

१.अठारह वर्ष से अधिक कोई भी व्यक्ति दान कर सकता है। देह-दान का इच्छा पत्र भरना पड़ता है जिसमें दो गवाहों की जरूरत होती है।

२.सर्जरी की इस नई तकनीक की खोज इसलिए संभव हो सकी क्योंकि किसी ने मेडिकल साइन्स के लिए अपना शरीर दान दिया था। मृत देह के प्रयोगों से डॉक्टरों व सर्जनों की नई पीढ़ी तैयार होती है, शरीर रचना की खोज से रोगियों को नया जीवन-दान मिलता है। अध्ययन से शोध तक शरीर के अनेक हिस्सों का नया-नया ज्ञान प्राप्त होता जा रहा है एवं शरीर विज्ञान से आगे से आगे बढ़ता जा रहा है। प्रयोग का क्षेत्र अनन्त है।

३. दान में मिली मृत देह पर विभिन्न रासायनिक क्रियाओं से सारे बैक्टीरिया मर जाते हैं और देह कभी भी खराब नहीं होती है, न सड़ती है, न गलती है, न बदबू देती है। लम्बे समय तक मृतक देह से अंगों की नई नई जानकारियाँ मिलती रहती हैं।

४.आत्महत्या अथवा हत्या, अत्यधिक सड़न, अधिक मोटापा, अत्यधिक दुबलापन, संक्रामक रोग से मौत, बॉडी का पोस्टमार्टम किया गया हो, इन अवस्थाओं में मृत देह स्वीकार नहीं की जाती है।

जीवित अवस्था में परोपकार एवं मरने पर भी परोपकार

मृत देह की राख व मिट्टी अगर प्रयोगों से सोना, हीरा, मोती बन जाती है तो कहना ही क्या है? राख व मिट्टी भी चमकने लग जाती है

परोपकार पुण्याय, परहित सरिस धर्म नहीं भाई,
परोपकाराय सतां विभूतयः।

(सज्जनों की सम्पत्ति औरों के लिए होती है) इसलिए देहदान जरूरी है। इससे बढ़कर पुण्य और क्या हो सकता है?

मृत शरीर जलाते हैं, भूमि में गाड़ते हैं, नदियों, जंगलों में फेंकते हैं, बिजली की भट्टियों में समाप्त किया जाता है। इन क्रियाओं से शरीर नष्ट होकर राख व मिट्टी में बदल जाता है, लेकिन कोई नई जानकारी नहीं मिलती है। राख व मिट्टी का कोई भी उपयोग नहीं।

उपरोक्त तरीकों से मृत देह को नष्ट न करके, मृत देह को जिन्दा शरीर की तरह से उपयोगी बनाना चाहें एवं हमारी मृत देह भी परोपकार करती रहे, तो देह दान करना चाहिए, जिसके प्रयोगों से पीड़ितों को राहत मिल सके, परोपकार हो, नया विज्ञान शरीर रचना का प्राप्त हो, मृत देह जो किसी काम की नहीं वह भी जीवित शरीर की तरह काम करने लगे, परोपकारी बने इससे बढ़कर कोई पुण्य नहीं। आइए हम भी देहदान(महादान) करके पुण्य प्राप्त करें।

मैं मेरे देहदान की घोषणा १५ अगस्त २०१० को कर चुका हूँ, मेरे तीन पुत्र हैं जो कोलकाता, रायपुर, सिलीगुड़ी में रहते हैं इसलिए मैं तीनों स्थानों के मेडिकल कॉलेजों के एनॉटोमी डिपार्टमेन्ट में देहदान के फार्म भरकर रजिस्टर्ड करा चुका हूँ एवं मरणोपरांत नेत्र दान की घोषणा भी १९९५ में कर चुका हूँ, सिर्फ जानकारी के लिए यह पत्रक प्रकाशित कर रहा हूँ।

- कुलपति गुरुकुल हरिपुर (ओडीशा)

स्व. श्री बंशीधरा अग्रवाल

अमर देहदान के संदर्भ में मुझे अचानक पूज्य श्री बंशीधर अग्रवाल का स्मरण हो आया। विचार आर्यत्व से ओतप्रोत, कार्य आर्यत्व से ओतप्रोत, जीवनचर्या आदर्श आर्य की और जीवन का उद्देश्य- परोपकार। जीवनभर हजार हाथों से दान किया और अन्त में अमर दान-देहदान (उनकी अन्तिम इच्छा श्री सुरेशचन्द्र अग्रवाल (प्रधान- आर्य प्रतिनिधि सभा गुजरात) व अन्य पुत्रों में सम्मान सहित पूरी की) दानवीर वानप्रस्थ श्री सत्यनारायण जी आर्य ने भी देहदान का संकल्प लिया है तथा अन्यों को भी प्रेरणा कर रहे हैं।

- अशोक आर्य

बाल वाटिका

अमूल्य

श्याम को बड़े जोरों की भूख लग रही थी। वो रसोई में अपनी माँ के पास गया और माँ से बोला-माँ जल्दी खाना दो। माँ ने कहा कि अभी खाना बन रहा है। थोड़ी देर में परोस दूँगी। श्याम को अच्छा नहीं लगा वह बाहर चला गया। थोड़ी देर में वह फिर वापस आया और माँ को एक कागज थमा दिया। माँ ने आश्चर्यचकित होकर वह कागज खोला उस पर लिखा था-

घास काटने का मूल्य- बीस रुपये।

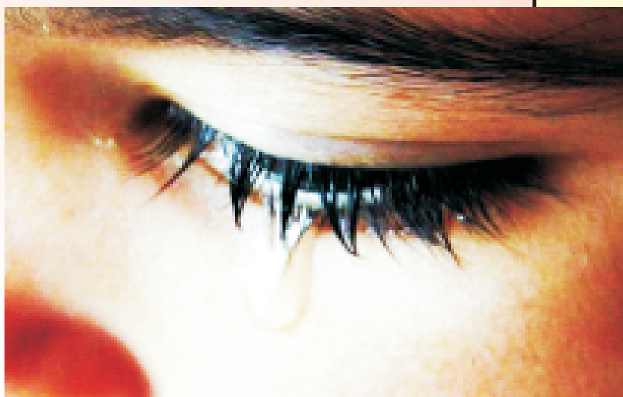

अपना कमरा इस सप्ताह साफ करने का मूल्य- पाँच रुपया।

बाजार से आपका सामान लाने गया मूल्य- चालीस रुपया।

जब आप बाजार गईं थीं तो छोटे भाई की देखरेख की इसका मूल्य- दस रुपया।

घर का सारा कूड़ा बाहर फेंककर आया इसका मूल्य- दस रुपया।

बाहर की साफ सफाई भी की मूल्य- दस रुपया।

कुल योग- पिचानवे रुपया।

यह पढ़कर माँ ठगी सी खड़ी रह गई। वह समझ नहीं पाई कि इसका क्या उत्तर दे। उसकी आँख डबडबा गई। धीरे से उसने एक पैन लिया और उस कागज को पलटकर उस पर लिखा-

तुम्हें नौ महीने अपनी कोख में रखा- निःशुल्क।

जब तुम रात को बिस्तर गीला कर देते थे तो जागकर तुम्हारे कपड़े बदलती थी और तुम्हें सूखी तरफ सुलाकर, खुद गीले में सोती थी- निःशुल्क।

गन्दगी से सभी को घृणा होती है। परन्तु खुशी-खुशी तुम्हारी नैपी साफ की, तुम्हें साफ किया और नहलाया धुलाया- निःशुल्क।

जब तुम बीमार पड़ते थे तो रात-रात भर जागकर तुम्हारी तीमारदारी की और भगवान से केवल तभी नहीं, सदा तुम्हारे स्वास्थ्य की कामना की- निःशुल्क।

तुमने जब-जब भी परेशानियाँ खड़ी कीं तब-तब तुम्हें समझाकर एक अच्छा बालक बनाने का प्रयास किया- निःशुल्क।

हरदम तुम्हारी कुशलता की चिन्ता से ग्रस्त रहती हूँ- निःशुल्क।

और इस पर भी मेरा सारा प्यार जो तुम्हारे लिए है- निःशुल्क।

कुल योग- निःशुल्क ।

> जैसे माता सन्तानों पर प्रेम, उनका हित करना चाहती है, उतना अन्य कोई नहीं करता।
> सत्यार्थप्रकाश द्वितीय समुल्लास

माँ ने चुपचाप यह कागज श्याम को पकड़ा दिया। श्याम ने सब कुछ पढ़ा, वह अवाक् खड़ा रह गया। उसने माँ की तरफ देखा। माँ की आँखों में आँसू थे। अब उसे अपनी नालायकी समझ में आ चुकी थी।

माँ के आँसू गालों पर बहकर नीचे गिरने वाले थे कि श्याम तेजी से आगे बढ़ा और अपने हाथ में उन आँसुओं को लेकर बोला- अमूल्य।

इसके बाद माँ बेटे लिपटकर खूब रोये। श्याम ने माँ से क्षमा माँगी। माँ का हृदय तो माँ का हृदय ही होता है। उसमें बालक के लिए केवल प्यार होता है। अब यह बात पूरी तरह श्याम की समझ में आ चुकी थी।

संकलन- दिलीप पंवार, उदयपुर

ईश्वर तेरी दुनिया कितनी न्यारी कितनी प्यारी

In Tokyo, a bicycle is faster than a car for most trips of less than 50 minutes!

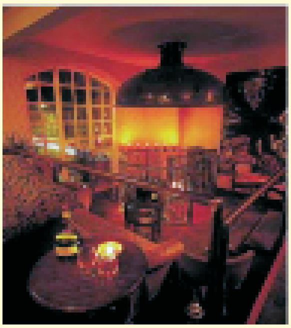

Tourists visiting Iceland should know that tipping at a restaurant is considered an insult!

Until the nineteenth century, solid blocks of tea were used as money in Siberia!

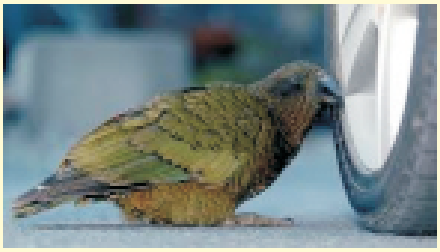

The two-foot long bird called a Kea that lives in New Zealand likes to eat the strips of rubber around car windows!

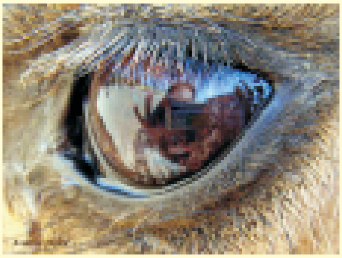

Camels have three eyelids to protect themselves from blowing sand!

Human teeth are almost as hard as rocks!

A cockroach can live several weeks with its head cut off - it dies from starvation!

It's against the law to burp, or sneeze in a certain church in Omaha, Nebraska!

A mole can dig a tunnel 300 feet long in just one night!

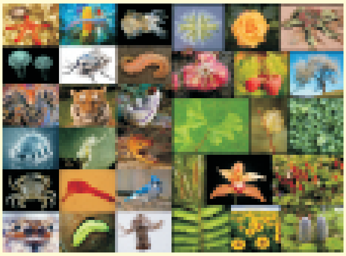

There are more than one million animal species on Earth!

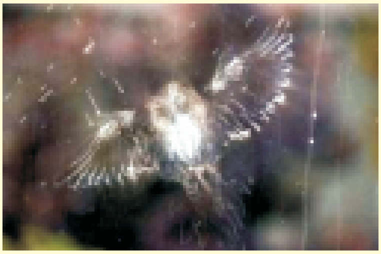

Over 10,000 birds a year die from smashing into windows!

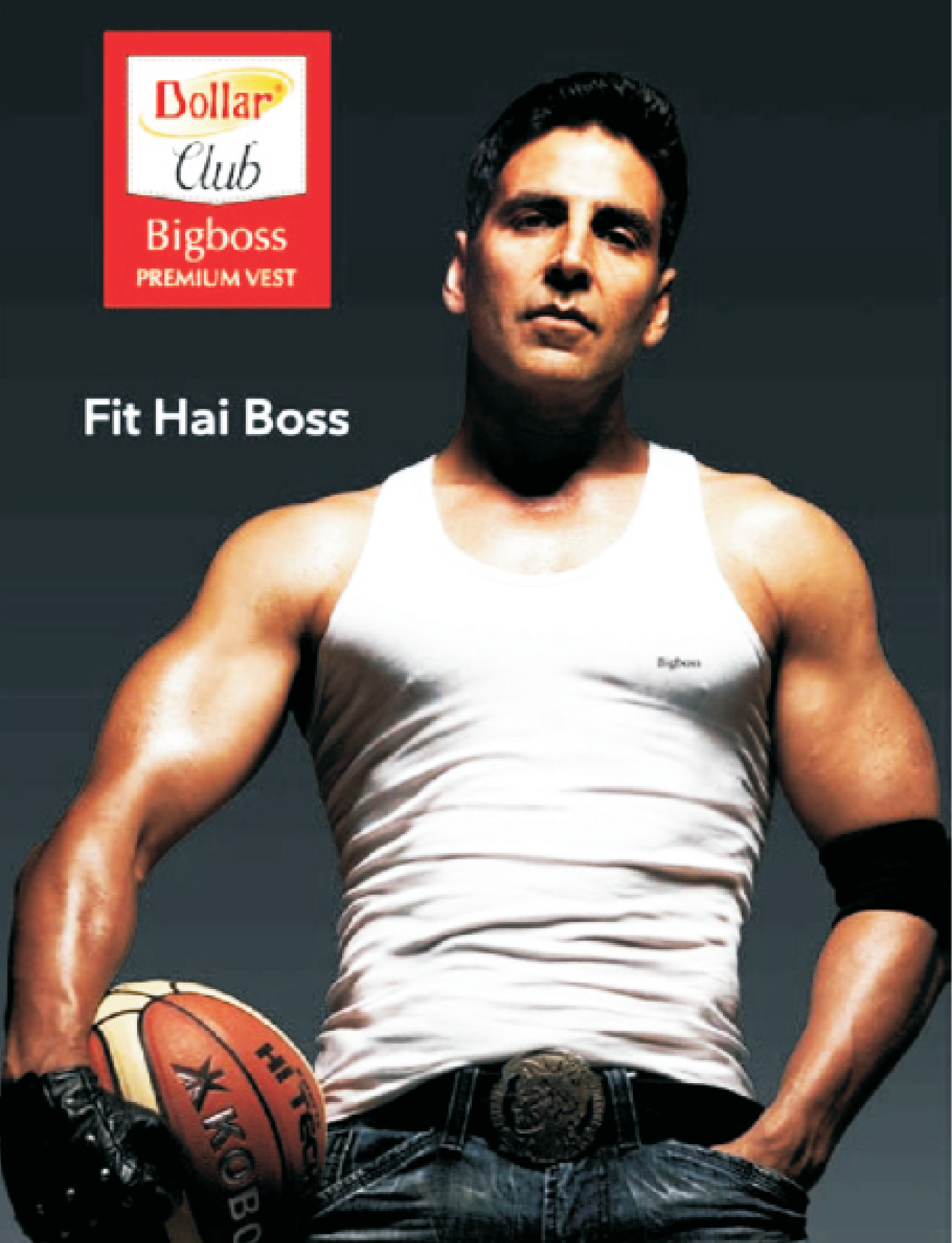
Dollar
Club
Bigboss
PREMIUM VEST
Fit Hai Boss

RNI Registration No. RAJHIN/2012/47777 October-2013 Postal Registration No. RJ/UD/29-107/2013-2015

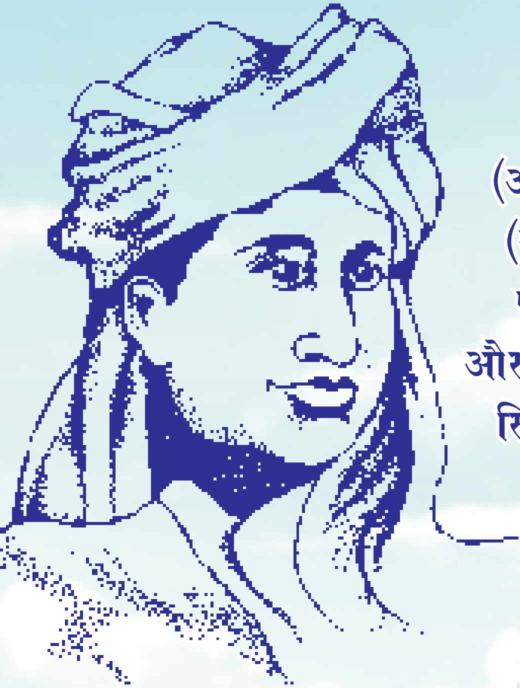

इसलिये सुन्दर जंगल-धन-धान्ययुक्त देश में (धनुर्दुर्गम्) धनुर्धारी पुरुषों से गहन (महिर्दुर्गम्) मट्टी से किया हुआ (अब्ददुर्गम्) जल से घेरा हुआ (वार्क्ष) अर्थात् चारों ओर वन (नृर्दुर्गम्) चारों ओर सेना रहे (गिरिर्दुर्गम्) अर्थात् चारों ओर पहाड़ों के बीच में कोट बनाके इसके मध्य में नगर बनावे। और नगर के चारों ओर (प्राकार) प्रकोट बनावे, क्योंकि उसमें स्थित हुआ एक वीर धनुधारी शस्त्रयुक्त पुरुष सौ के साथ, और सौ, दश हजार के साथ युद्ध कर सकते हैं, इसीलिये अवश्य दुर्ग का बनाना उचित है।

सत्यार्थप्रकाश, षष्ठ समुल्लास

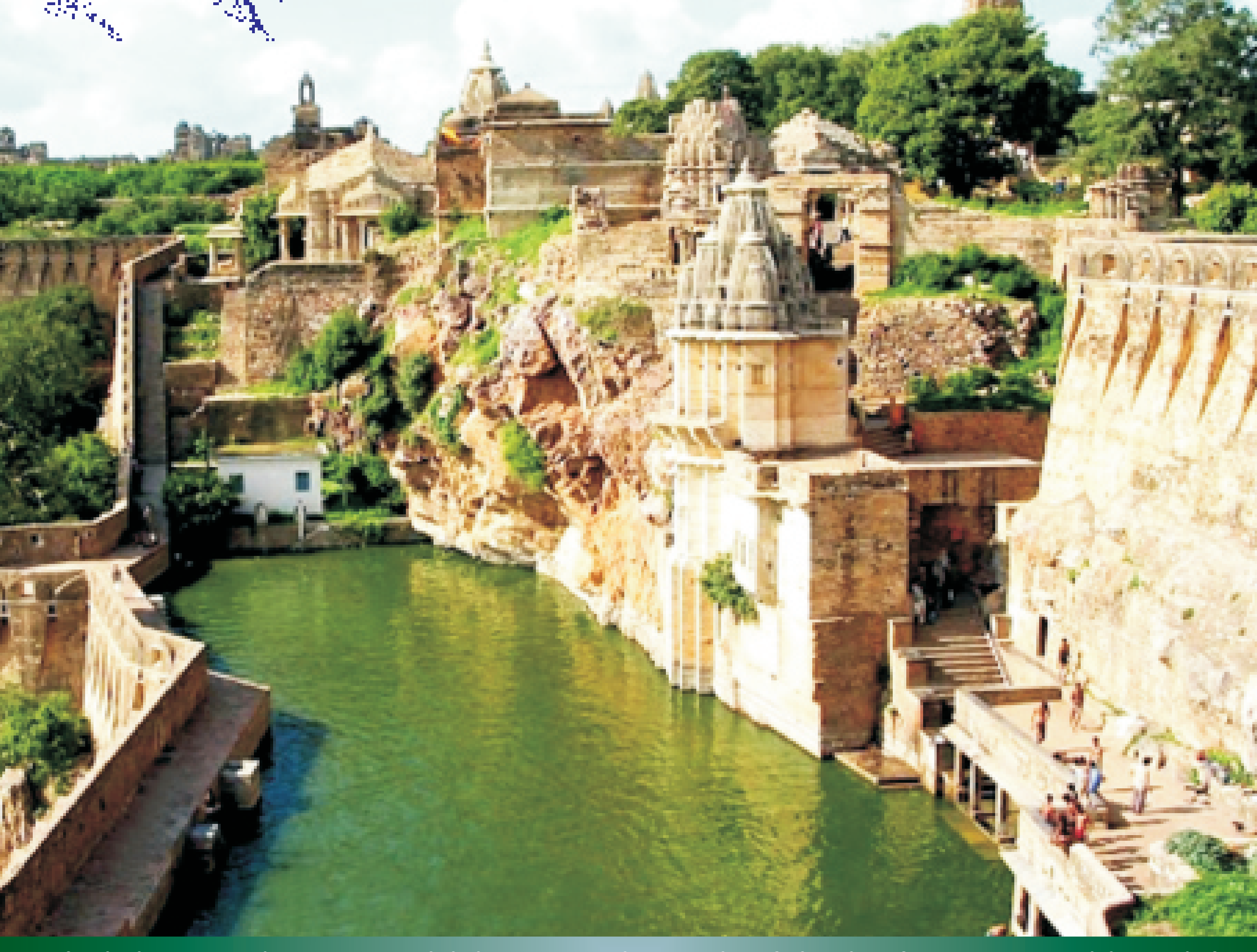

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित तथा कार्यालय श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास नवलखा महल गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य